चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

क्यों बिगड़े हालात?

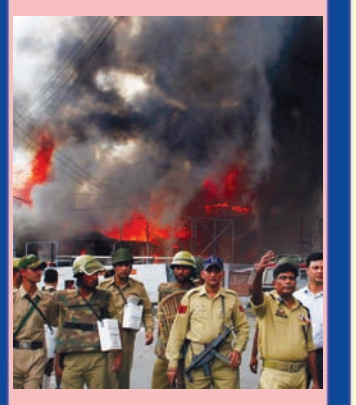

पेज 3

राजस्थान पुलिस ने गुजरात दोहराया

पेज 4

प्राथमिक शिक्षा की तस्वीर नहीं बदली

पेज 5

पाकिस्तान, क्रिकेट, अंडरवर्ल्ड, सेक्स और मैच फिक्सिंग

पेज 15

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 27 सितंबर–03 अक्टूबर 2010

कश्मीरियों के सिर पर गोली मत मारो

हिंसा ने जम्मू-कश्मीर में जनसामान्य की रातों की नींद उड़ा दी है. मारकाट, फायरिंग और कर्फ्यू के चलते लोगों का जीना मुहाल हो गया है. सरकार चाहे राज्य की हो या केंद्र की, दोनों को मालूम है कि समस्या का समाधान क्या है, लेकिन दिक्कत इस बात की है कि इनमें से एक लगभग असहाय है और दूसरी येन केन प्रकारेण समस्या को जिंदा रखना चाहती है, ताकि वह मौके-बेमौके अपनी राजनीतिक रोटियां सेंक सके.

वसीम राशिद

पिछले चुनाव के बाद जब उमर अब्दुल्ला ने कश्मीर की सत्ता संभाली थी, तो लोगों ने उनसे बड़ी-बड़ी उम्मीदें लगाई थीं. आम धारणा यही थी कि उमर नई पीढ़ी के हैं, जवान हैं, केंद्र सरकार में मंत्री रहने का अनुभव उनके पास है, इसलिए उनके काम करने का तरीका कुछ अलग होगा. सत्ता में आने के बाद उमर से पहली गलती यह हुई कि पिछले साल शोपियां में दो लड़कियों की हत्या हुई थी. उमर ने उसी शाम पूरे मामले को जाने बग़ैर यह कह दिया कि लड़कियों की मौत पानी में डूबने से हुई. उनके इस बयान को अपरिपक्व माना गया. बाद में इसे लेकर बहुत हंगामा हुआ और कश्मीर दो महीने तक बंद रहा. सूबे की हालत के लिए उमर के इस बयान को ज़िम्मेदार माना गया. विवाद गहराया तो सीबीआई को लाया गया. सरकार ने अपना चेहरा बचाने के लिए वही रिपोर्ट सामने डाल दी, जिसमें उमर ने कहा था कि दोनों लड़कियां डूबने से मरी थीं. लोगों को उमर की वह अपरिपक्वता आज भी याद है. वह अमरनाथ यात्रा का वक़्त था और इसके चलते यात्रा पर भी असर पड़ा था.

जून में एक छोटे से बच्चे तुफैल मुट्टू की मौत हो गई थी. जब मौत हुई और स्थानीय टीवी चैनलों पर यह ख़बर दिखाई गई तो उमर ने पहली टिप्पणी यही की कि तुफ़ैल की मौत ईदगाह के पास क्रिकेट स्टेडियम में एक लड़के द्वारा बैट की चोट से हुई. मतलब एक लड़के ने बैट उठाया और तुफ़ैल पर हमला कर दिया, जिससे उसकी मौत हो गई. लेकिन लोगों का दबाव रातोंरात बढ़ गया और अगली सुबह पोस्टमार्टम रिपोर्ट ने हमें बता दिया कि तुफ़ैल के सिर के परखच्चे उड़ गए थे, क्योंकि उसके सिर के अंदर आंसू गैस का गोला घुस गया था. यानी उमर ने जो बयान दिया था, वह एक बार फिर झूठ निकला, जो अपरिपक्व और लोगों को बहकाने वाला था. लोगों का गुस्सा एक बार फिर चरम पर पहुंच गया, क्योंकि इस बार भी उमर ने वही कहा कि उनके पास मामले की पूरी जानकारी नहीं थी. तुफ़ैल की मौत के बाद भावनाओं ने उबाल खाया और एक अजीबोग़रीब बात यह हो गई कि पिछले तीन महीनों से कश्मीर पूरी तरह बंद है. चाहे यह कर्फ्यू हो या अलगाववादियों की चाल, लेकिन पिछले क़रीब तीन महीने में तक़रीबन 90 मौतें हो चुकी हैं, यानी प्रतिदिन औसतन एक मौत. मौतों का एक दुष्चक्र बनता गया, जिसे उमर न रोक सके और न लोगों से माफी मांग सके. नतीजतन लोगों का गुस्सा परवान चढ़ता रहा. उमर की ये दो ग़लतियां अहम हैं, क्योंकि पिछले साल भी एक कत्ल के चलते यह आग भड़की थी और इस बार भी तुफ़ैल मुट्टू की मौत को लेकर यह आग भड़क गई.

कश्मीर के लोगों का मानना है कि उमर अब्दुल्ला को सत्ता में लाने का मक़सद गवर्नेंस नहीं, बल्कि समाधान की उम्मीद थी, लेकिन यह उम्मीद पूरी नहीं हो पाई. लोगों को जब इस बात का एहसास हुआ कि उमर समाधान नहीं दे पाएंगे तो वे विरोध में उठ खड़े हुए. उमर ने लोगों की नाराज़गी दूर करने के लिए कुछ नहीं किया, सिवाय केंद्र सरकार की हिदायतों को अमलीजामा पहनाने के. चाहे सेना की मदद लेने का मामला हो या कर्फ्यू लगाने का, उन्होंने केंद्र के आदेश का पालन किया. लोगों को यह लगा कि उमर अब्दुल्ला उनके प्रतिनिधि होने के बावजूद दिल्ली से दिशानिर्देश लेते रहे. लोगों को लगने लगा कि पीडीपी की सरकार बेहतर थी. जब पीडीपी सत्ता में आई तो उसने समाधान नहीं दिया, लेकिन उसके लिए पहल ज़रूर की. श्रीनगर-मुजफ्फराबाद सड़क का खुलना इसका एक उदाहरण है. इसके साथ लोगों ने अटल बिहारी वाजपेयी को याद किया, जिन्होंने कांफिडेंस बिल्डिंग मेजर्स शुरू कराए थे. वाजपेयी बातचीत में यक़ीन रखते थे और उन्होंने ऐसा किया भी. इसके साथ-साथ लोगों ने एन एन वोरा के राज्यपाल शासन के दौर को भी याद किया, क्योंकि उन्होंने राउंड टेबल बुलवाया था. नेशनल कांफ्रेंस की मौजूदा सरकार की सीधी तुलना लोग पिछली तीन सरकारों से कर रहे हैं, जिनमें पीडीपी भी है, भाजपा भी है और एन एन वोरा के राज्यपाल शासन का दौर भी. दूसरी चीज यह है कि उमर अब्दुल्ला को आगे करने के पीछे नेशनल कांफ्रेंस की मंशा यह थी कि इससे लोगों की उम्मीदें पार्टी से जुड़ जाएंगी, क्योंकि वह जवान हैं, आम लोगों से मेलजोल कर सकते हैं. उन्हें लेकर लोगों की कोई पूर्व निर्धारित धारणा नहीं थी, न अच्छी न बुरी, लेकिन उमर को कश्मीर की राजनीति का स्वरूप समझ में नहीं आया. संकट की घड़ी में वह अपनी प्रशासनिक योग्यता भी नहीं दिखा पाए. पिछले महीने एक प्रेस कांफ्रेंस में उमर ने कहा था कि पुलिस और सुरक्षाबल उनकी सुनते ही नहीं हैं. वह पुलिस और सुरक्षाबलों को जो आदेश देते हैं, उसकी सही तामील नहीं होती है. यानी उन्होंने ख़ुद ही कबूल कर लिया कि प्रशासन पर उनका नियंत्रण नहीं है.

कश्मीर ने पहले भी पीडीपी और कांग्रेस की गठबंधन सरकार देखी है. उसमें बहुत सारी दरारें तो थीं, लेकिन उसे केंद्र का समर्थन हासिल था और कांग्रेस मुख्य भूमिका में थी, इसलिए गुलाम नबी आज़ाद किसी तरह सरकार चलाने में कामयाब रहे. इस बार गठबंधन में मुख्य भूमिका नेशनल कांफ्रेंस की है. ऐसी हालत में जो गठबंधन का साझीदार होता है, उस पर पूरा विश्वास नहीं कर सकते हैं. कहीं न कहीं वह भी अपनी अलग राजनीतिक रोटी सेंकने की कोशिश कर सकता है. एक अफसर दूसरे अफसर की नहीं सुनता है, एक मंत्री दूसरे मंत्री को नहीं मानता है. एक पार्टी दूसरी पार्टी को नीचा दिखाने की कोशिश करती है और अपने वोट बैंक को अगले चुनाव के लिए मज़बूत करने की कोशिश करती है. कांग्रेस ने पिछली बार भी ऐसा किया था और इस बार भी करने की कोशिश की थी. इसकी एक छोटी सी मिसाल पिछले दिनों देखने को मिली थी, जब एक सितंबर को कश्मीर का अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा बंद हो जाने की घोषणा हुई थी. इसके बाद उमर ने नागरिक उड्डयन मंत्रालय से अपील की थी कि किसी भी हालत में अल्टरनेटिव एयरपोर्ट को खुला रखा जाए. उमर दो-तीन दिनों तक हाथ-पैर मारते रहे, लेकिन उन्हें मना कर दिया गया. उमर दिल्ली से आकर यह कह देते हैं कि हवाई अड्डा बंद हो जाएगा और इस बात के लिए वह यहां के लोगों से माफी भी मांगते हैं. इसके अगले ही दिन सैफुद्दीन सोज यह घोषणा करते हैं कि अल्टरनेटिव एयरपोर्ट खुला रहेगा. यह ख़ुशख़बरी केंद्र सरकार सैफुद्दीन सोज यानी अपने प्रतिनिधि के हाथों कश्मीर के लोगों तक पहुंचाता है. इसका मक़सद यह था कि क्रेडिट कांग्रेस को मिले. गठबंधन में इस तरह का खेल चलता रहता है और यहां के लोगों

(शेष पृष्ठ 2 पर)

कश्मीर के लोगों का मानना है कि उमर अब्दुल्ला को सत्ता में लाने का मक़सद गवर्नेंस नहीं, बल्कि समाधान की उम्मीद थी, लेकिन यह उम्मीद पूरी नहीं हो पाई. लोगों को जब इस बात का एहसास हुआ कि उमर समाधान नहीं दे पाएंगे तो वे विरोध में उठ खड़े हुए.

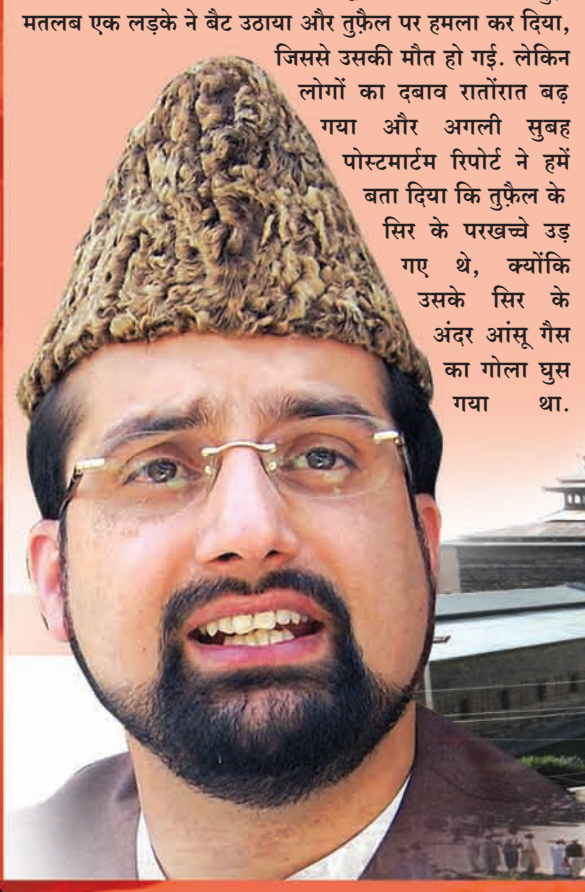

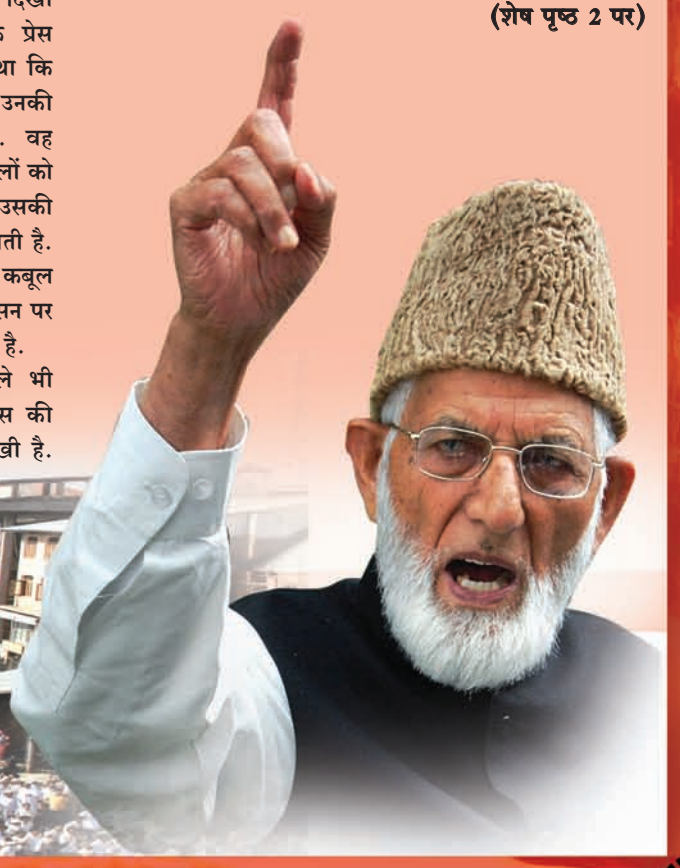

भाजपा का दावा है कि थॉमस की नियुक्ति का असल मकसद 2-जी स्पेक्ट्रम घोटाले और राष्ट्रमंडल खेलों की तैयारियों में हुए घोटाले पर पर्दा डालना है.

दिल्ली का बाबू

सबसे बड़ा सवाल

नौकरशाहों के लिए यह एक राहत की बात है कि सेवानिवृत्ति के बाद उन्हें तत्काल ही सार्वजनिक जीवन से दूर होने की जरूरत नहीं है, लेकिन मुख्य सतर्कता आयुक्त के पद पर दूरसंचार सचिव पी जे थॉमस की नियुक्ति पर उठे विवाद ने सरकार की मुश्किलें बढ़ा दी हैं, जबकि सरकार अपने चयन को सही साबित करने के लिए पुरजोर कोशिश कर रही है. मुख्य सतर्कता आयुक्त जैसे संवेदनशील पद पर नियुक्तियों के मामले में यह संभव है कि सभी राजनीतिक पार्टियां सरकार के नजरिए से सहमत न हों. भाजपा पहले ही थॉमस के दागदार अतीत को मुद्दा बना चुकी है. मुख्य विपक्षी पार्टी का दावा है कि थॉमस की नियुक्ति का असल मकसद 2-जी स्पेक्ट्रम घोटाले और राष्ट्रमंडल खेलों की तैयारियों में हुए घोटाले पर पर्दा डालना है, लेकिन न तो प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और न ही गृहमंत्री पी चिदंबरम भाजपा के इन आरोपों को कोई तवज्जो दे रहे हैं. फिर भी सत्ता के गलियारों में यह चर्चा आम है कि सरकार के पास विकल्पों की कमी नहीं थी. वित्त सचिव अशोक चावला, कृषि मंत्रालय के पूर्व सचिव नंद कुमार और कार्मिक सचिव शांतनु कंसुल भी इस पद की दौड़ में शामिल थे, फिर सरकार ने थॉमस को ही क्यों चुना. अब यह ऐसा सवाल है, जिसका जवाब इतनी आसानी से नहीं मिल सकता. केवल थॉमस का कामकाज ही उनके विरोधियों को चुप कर सकता है.

दिलीप चेरियन

कला की अनदेखी

देश के सांस्कृतिक संस्थानों की लगातार अनदेखी किए जाने की यह पुरानी कहानी है. पिछले तीन साल से राजधानी दिल्ली में स्थित नेशनल म्यूजियम बिना पेशेवर मुखिया के ही चल रहा है. म्यूजियम के संचालन का तदर्थ कार्यभार एक नौकरशाह के हाथों में है. ए के वी एस रेड्डी देश के इस सबसे प्रतिष्ठित म्यूजियम का मुखिया पद संभालने वाले आखिरी व्यक्ति थे, लेकिन उनके जाने के बाद से संस्कृति मंत्रालय उनका उत्तराधिकारी तलाश करने में अब तक विफल रहा है. वह भी तब, जबकि इस पद के लिए वांछित योग्यताओं को कम कर दिया गया. मास्टर डिग्री और किसी भी म्यूजियम के संचालन का पांच साल का अनुभव रखने वाला कोई भी व्यक्ति इस पद पर नियुक्त किया जा सकता है. इतना ही नहीं, सूत्रों का यह भी कहना है कि संग्रहालय के लिए स्वीकृत कुल 207 पदों में से 140-150 पदों को अभी तक भरा नहीं गया है. इस साल की शुरुआत में कैबिनेट सचिव के एम चंद्रशेखर, संस्कृति सचिव जवाहर सरकार और कार्मिक सचिव शांतनु कंसुल की उच्चस्तरीय समिति भी महानिदेशक पद के लिए किसी योग्य उम्मीदवार की तलाश नहीं कर पाई. समिति ने मशहूर संग्रहालयविद् महरूख तारापोर को इस पद का प्रस्ताव किया था. फिलहाल न्यूयॉर्क के मेट्रोपोलिटन म्यूजियम के साथ जुड़े तारापोर ने उम्मीद के अनुरूप ही इससे इंकार कर दिया. दूसरी ओर, संस्कृति मंत्रालय के अधिकारी म्यूजियम में खाली पड़े पदों के लिए संघ लोक सेवा आयोग और उसकी चयन प्रक्रिया को जिम्मेदार ठहराते हैं, लेकिन नौकरशाहों की इस आपसी खींचतान में नुकसान तो इस म्यूजियम का ही हो रहा है.

dilipcherian@gmail..com

साउथ ब्लॉक

28 आईपीएस अधिकारियों की पदोन्नति

1978 बैच के 28 आईपीएस अधिकारियों को भारत सरकार में अतिरिक्त महानिदेशक (एडीजी) और इसके समकक्ष पदों के लिए सूचीबद्ध किया गया है. इसमें टी नार्बू, अभिजीत दत्ता, ए सी नेगी, विमला मेहरा, रंजीत नारायण, सतीश चंद्रा, के एस जंगपांगी, के एल बालासुब्रह्मण्यम, कश्मीर सिंह, राजीव कपूर, दिलीप तिवारी एवं एम रतन समेत 28 अधिकारियों के नाम शामिल हैं.

अजय आचार्या गृह मंत्रालय में नियुक्त

1976 बैच के मध्य प्रदेश कैडर के आईएएस अधिकारी अजय आचार्या रक्षा मंत्रालय में रक्षा उत्पाद विभाग के विशेष सचिव हैं. उन्हें गृह मंत्रालय के अंतर्गत आने वाली अंतरराज्यीय काउंसिल के सचिव के रूप में नियुक्त किया गया है. वह आईएएस अधिकारी मुकुल जोशी की जगह लेंगे, जो हाल में फार्मास्यूटिकल विभाग के सचिव के रूप में नियुक्त किए गए हैं.

सिद्धार्थ वाणिज्य मंत्रालय में नए संयुक्त सचिव

आईएएस अधिकारी सिद्धार्थ वाणिज्य विभाग में नए संयुक्त सचिव नियुक्त किए गए हैं. सिद्धार्थ पश्चिमी बंगाल कैडर के अधिकारी हैं. वह दिनेश शर्मा की जगह लेंगे. दिनेश शर्मा को वाणिज्य और औद्योगिक मंत्रालय में प्राइस स्टेबिलेशन ट्रस्ट (पीएसएफटी) के सीईओ के रूप में नियुक्त किया गया है.

अनुराधा गुप्ता स्वास्थ्य मंत्रालय में

आईएएस अधिकारी अनुराधा गुप्ता को अमरजीत सिन्हा की जगह स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय में संयुक्त सचिव के रूप में नियुक्त किया गया है. अनुराधा 1981 बैच और हरियाणा कैडर की आईएएस अधिकारी हैं. अमरजीत सिन्हा केंद्र में तैनाती का समय पूरा कर चुके थे.

कमला राव तंबाकू बोर्ड के नए चेयरमैन

आईएएस अधिकारी जी कमला वी राव वाणिज्य विभाग के तंबाकू बोर्ड, गुंटूर के नए चेयरमैन (संयुक्त सचिव के समकक्ष) होंगे. राव आईएएस अधिकारी जे सुरेश की जगह लेंगे, जो इसी साल अप्रैल महीने में अपने सेवा विस्तार की अवधि पूरी कर चुके हैं.

कश्मीरियों के सिर पर गोली मत मारो

पृष्ठ 1 का शेष

का मानना है कि कश्मीर में जिस तरह की हिंसा हुई है, उसमें कहीं न कहीं विपक्षी या गठबंधन के साझीदार दलों का हाथ भी है. शक की सुई पीडीपी की ओर घूमती है, तो एक तर्क कांग्रेस को भी कठघरे में खड़ा कर देता है. कांग्रेस भी इस वक़्त इस तरह का खेल खेल सकती है, ताकि लोगों के सामने यह बात स्पष्ट हो जाए कि पीडीपी एवं एनसी आतंकवाद की वजह से कश्मीर पर शासन करने की क्षमता खो चुके हैं और कांग्रेस का शासन ही राज्य को दोबारा पटरी पर ला सकता है. यह कांग्रेस की एक मंशा हो सकती है. ऐसा होने से कश्मीर के लोगों को यह लगने लगा है कि लॉबी बनाने और उसे ख़ुश करने के लिए राजनीतिक पार्टियां किसी भी हद तक जा सकती हैं. इसलिए इस वक़्त कश्मीरी जनता एनसी की नेकनीयती पर शक कर रही है, कांग्रेस के इरादों पर भी शक कर रही है. अगर पीडीपी कोई मदद दे रही है तो उसकी नीयत पर भी शक की तलवार लटक सकती है. ये सभी पार्टियां अपने निजी राजनीतिक हितों को पूरा करने में लगी रहती हैं और गठबंधन में इन्होंने एक-दूसरे को चोट पहुंचाई है. यदि बात अलगाववादियों की करें तो कई सालों से उनकी काफी मज़बूत पकड़ है. मुख्यधारा की राजनीतिक पार्टियों की आपसी खींचतान से यह पकड़ लगातार मज़बूत होती रही है. पीडीपी के शासनकाल में एनसी के प्रभाव वाले इलाक़ों में अशांति फैली तो एनसी के शासनकाल में पीडीपी के प्रभुत्व वाले क्षेत्रों में हिंसा को बढ़ावा मिला. इस वजह से अलगाववादियों ने मौक़े का फ़ायदा उठाया और पूरी कश्मीर घाटी में अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार कर लिया.

कश्मीर में गिलानी की जनता में पैठ है, इसमें कोई शक नहीं है. उनकी राजनीतिक अपील के साथ-साथ धार्मिक अपील भी है. ऐसा ही हाल मीर वाइज का भी है. अब ईद पर जो हुआ, उसमें उमर इसलिए हाईलाइट हो गए, क्योंकि ईद से कुछ दिन पहले गिलानी को गिरफ़्तार कर लिया गया था. उमर आज तक सिर्फ़ जामा मस्जिद में ही भाषण देते रहे हैं. गिलानी गिरफ़्तार हो गए थे तो इस बार उमर ने फ़ैसला लिया कि वह नमाज के लिए दरगाह जाएंगे. दरगाह में नमाज के लिए उन्हें तीन लाख की जगह पांच लाख लोगों का समर्थन मिला. दरगाह में ईद की नमाज और प्रदर्शन को शांतिपूर्ण बनाए रखने की शर्त पर अनुमति लेने के बाद वह लाल चौक की तरफ़ निकल पड़े. यह ईद की घटना है और पुलिस से अनुमति न मिलने के बावजूद सरकार ने उन्हें अनुमति दे दी. पुलिस के मना करने के बावजूद कश्मीर की जनता को जीतने के लिए उन्हें अनुमति मिल गई. नतीजा यह हुआ कि लाल चौक में एक जगह पर जब ये लोग इकट्ठा हुए, वहां जितनी भी सरकारी इमारतें थीं, उनमें आग लगा दी गई. शाम तक यह स्पष्ट हो गया कि लोग इतने उत्तेजित हो चुके हैं कि वे किसी भी नेता की बात सुनने के लिए राजी नहीं हैं और क़ानून अपने हाथ में लेकर कुछ भी करना चाहते हैं, ताकि वह दबाव बन सके, जो वे केंद्र पर बनाना चाहते हैं. इस हिंसा से हुर्रियत को यह फ़ायदा मिला कि ईद के बाद जो यहां के हालात बिगड़ चुके हैं, उसके पहले ही गिलानी ने अपना पांच सूत्रीय कार्यक्रम केंद्र को दे दिया था. केंद्र ने उनसे यह कहा कि वह इनका इस तरह नेतृत्व करें, ताकि हिंसा न हो और बातचीत हो जाए.

हुर्रियत ने अपना जो पांच सूत्रीय कार्यक्रम दिया था, उसमें आर्म्ड फोर्सेज स्पेशल पावर्स एक्ट, आटोनॉमी, मानवाधिकार, नौजवानों की रिहाई और सार्वजनिक सुरक्षा आदि शामिल हैं. ये पांच मुद्दे रखते हुए उसने केंद्र से कहा कि यह उसका शॉर्ट टर्म गोल है. इसके पूरा होने के बाद हम यहां अमन और शांति स्थापित करने की कोशिश करेंगे. फिर लांग टर्म गोल की चर्चा होगी, जिसके अंतर्गत कांफिडेंस बिल्डिंग मेजर्स शामिल हैं और केंद्र से बुलावा मिलने के बाद

हम बातचीत करेंगे. लेकिन ये पांच प्वाइंट उसकी शर्त हैं. पिछले तीन महीनों का लब्बोलुबाब यह है कि सारा मामला आर्म्ड फोर्सेज स्पेशल पावर्स एक्ट को वापस लेने पर ही आकर ठहर गया है. ईद से पहले ही उमर ने कहा था कि पांच ज़िलों में इसे हटा दिया जाएगा. गहराई में जाकर देखें तो यह पता चलता है कि पांच ज़िलों में पहले से ही सेना की कोई भूमिका नहीं रही है. वहां सिर्फ़ सीआरपीएफ और जेके पुलिस का नियंत्रण है, जो इस क़ानून के दायरे में नहीं आते हैं. फिर भी लोगों के गुस्से को कम करने में यह घोषणा कारगर हो सकती थी, लेकिन इसे भी रद्द कर दिया गया. इसके बाद आग में घी डालने वाला काम यह हो गया कि सीसीएस (कैबिनेट कमेटी ऑन सिक्यूरिटी) की बैठक जो ईद के दिन तय थी और लोग इस इंतज़ार में थे कि केंद्र ने कहा है कि ईद का तोहफ़ा मिलेगा, उसे ऐन ईद के दिन रद्द कर दिया गया. वह भी सिर्फ़ इसलिए कि एक या दो मंत्री अभी नहीं आ सकते हैं. स्थानीय लोगों की इस पर यह प्रतिक्रिया रही कि क्या कश्मीर को प्राथमिकता नहीं बनाया जा सकता है, क्या कश्मीर की भावनाओं को अहमियत नहीं दी जा सकती है. और ऐसा क्या था कि दो लोग नहीं आ सके और यूपीए सरकार ने सीसीएस जैसे बड़ी चीज को स्थगित कर दिया, जबकि लोगों की नजरें टिकी हुई थीं और वह ईद के तोहफ़े की प्रतीक्षा कर रहे थे. इस तरह यहां के लोगों का मानना है कि उनकी भावनाओं के साथ खेला जाता है. केंद्र हमेशा सोचता है कि वक़्त गुज़र जाएगा, गुस्सा ठंडा हो जाएगा, एक आर्थिक पैकेज दे दिया जाएगा, लोन दे दिया जाएगा, ब्याज माफ कर दिया जाएगा और लोग चुप हो जाएंगे. अबकी बार चूंकि मामले ने तूल पकड़ लिया था और इन पांच बिंदुओं पर लोग गंभीर हो गए थे. यह कहा गया कि मणिपुर से आर्म्ड फोर्सेज स्पेशल पावर्स एक्ट हटा दिया गया तो यहां से क्यों नहीं.

आम लोगों का यही मानना है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह नेक इंसान हैं. अगर उनके सामने मुद्दे को ठीक तरीक़े से रखा जाए तो वह कोई न कोई समाधान दे सकते हैं. कांग्रेस पार्टी के प्रति लोगों की अच्छी धारणा नहीं है, वे इसे कश्मीर की जनता का विरोधी मानते हैं, लेकिन मनमोहन सिंह को लेकर ऐसा नही है. लोगों की यह इच्छा भी है कि हिंसा ख़त्म हो जाए, शांति क़ायम हो जाए और कर्फ्यू हट जाए. यह लोगों के लिए एक बड़ी ज़रूरत है, क्योंकि लोग चाहते हैं कि उन्हें थोड़ी सी आज़ादी मिले. स्वास्थ्य-चिकित्सा आदि सुविधाएं एकदम ठप हो गई हैं, बच्चों के खाने की चीजें बाज़ार से पूरी तरह ग़ायब हो चुकी हैं. लोग इस कर्फ्यू से अब आजिज आ चुके हैं. साथ ही यहां जिस तरह संपत्ति को नुक़सान पहुंचाया गया है, लोग उसके भी ख़िलाफ़ हैं. वे यह नहीं चाहते कि स्कूल चाहे अल्पसंख्यकों का हो या हिंदुओं का, उसे कोई नुक़सान पहुंचे. दूसरी बात कुरान को जलाने की अपील पर हिंदुस्तान या पूरी दुनिया में कहीं भी कोई हंगामा नहीं हुआ, लेकिन इस झूठी ख़बर को जानबूझ कर कश्मीर तक पहुंचाया गया. कश्मीर में हिंसा का सबसे ख़तरनाक दिन वही रहा, जब अधिकारिक तौर पर 17 और अनाधिकारिक रूप से 19 लोग मारे गए. अवसरवादी लोग हर जगह मौजूद हैं, जो यहां भी सारे किए धरे पर पानी फेरने की कोशिश करते रहते हैं. कश्मीर की हालत में हर कोई अपना निजी स्वार्थ देख रहा है. इसके अलावा जो विश्वास में कमी है, वह विरोध करते समय न सिर्फ़ सीबीआई और राज्य सरकार के ख़िलाफ़ नज़र आई, बल्कि यह केंद्र सरकार के ख़िलाफ़ भी है. इस बात को बार-बार स्पष्ट किया गया है कि सारा मामला सिर्फ़ और सिर्फ़ विश्वास का है. एक बार कोई ऐसा क़दम उठाने की ज़रूरत है, जिससे नई पीढ़ी का विश्वास बन जाए, फिर यह समस्या जल्दी हल हो सकती है.

कश्मीरी इस वक़्त पिछले 50 सालों के उदाहरण बार-बार इसीलिए दे रहे हैं कि जो भी सरकार आई, केंद्र ने ही उसे घुमाया. एनसी और पीडीपी जैसी पार्टियां कुछ भी नहीं कर सकीं. इसलिए हमें उनकी कोई ज़रूरत नहीं है. आज हमें न उमर अब्दुल्ला की ज़रूरत है, न महबूबा मुफ्ती की. जब तक यहां मिली जुली सरकार रहेगी, यह समस्या बनी रहेगी. जब तक एक पार्टी जवाबदेह नहीं हो जाती है, ये लोग एक-दूसरे पर ज़िम्मेदारी डालते रहेंगे. एनसी कहेगी कि कांग्रेस हमारा साथ नहीं दे रही है और कांग्रेस कहेगी कि हम निराश हैं, इसलिए एनसी के साथ नहीं हैं. राजनीतिक पार्टियां ज़िम्मेदारी नहीं ले रही हैं, बल्कि एक-दूसरे पर आरोप लगा रही हैं. जब तक हमारे पास एक पार्टी, एक सरकार, एक मुख्यमंत्री नहीं होगा, कोई भी जवाबदेह नहीं होगा. यही आज पूरे कश्मीर की हक़ीक़त है. अगर आज कोई और पार्टी भी होती तो शायद तब भी हालात यही होते.

editorurdu@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 2 अंक 29
दिल्ली, 27 सितंबर-03 अक्टूबर 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.

संपादकीय 0120-4783999/11-23418962
विज्ञापन + 91 9873575318
प्रसार + 91 9013478398
फैक्स न. 0120-4783950

पृष्ठ-16 (+4)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

मीडिया में इन दिनों यह सवाल भी चर्चा का विषय बना हुआ है कि क्या वर्तमान परिस्थितियां केंद्र और राज्य सरकारों की ओर से सियासी अपरिपक्वता का नतीजा हैं.

जम्मू-कश्मीर

क्यों बिगड़े हालात?

तीन माह से हिंसा की भट्ठी में जल रही कश्मीर घाटी में हर गुज़रने वाले दिन के साथ हालात बद से बदतर होते जा रहे हैं. जब कश्मीर के हालात पर नई दिल्ली में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अध्यक्षता में बैठक चल रही थी, तब भी घाटी के विभिन्न क्षेत्रों में हिंसा जारी थी. इस दिन पुलिस और सेना की फायरिंग में 17 लोग मारे गए और 100 घायल हो गए. मध्य जून से लेकर अब तक पुलिस और सेना की फायरिंग में 85 आम नागरिक मारे जा चुके हैं, जबकि सैकड़ों लोग घायल हैं. इनमें से दर्जनों इस वक़्त श्रीनगर के अस्पतालों में मौत और ज़िंदगी के बीच झूल रहे हैं. तीन माह के इस हिंसक दौर में निरंतर हड़तालों और कर्फ्यू के कारण जनता को कई गंभीर परेशानियों का सामना करना पड़ा है. दरअसल सरकार स्थिति को काबू में करने के लिए निरंतर कर्फ्यू का हथियार इस्तेमाल करने की कोशिश कर रही है. पिछले दो दशकों से सशस्त्र हंगामों के शिकार कश्मीर में हिंसा का ताज़ा दौर इसी साल 11 जून को उस वक़्त शुरू हुआ, जब श्रीनगर के बाएं शहर में सेना के हाथों एक किशोर तुफ़ैल मुट्टू मारा गया. इसके बाद हिंसक विरोध प्रदर्शनों का सिलसिला शुरू हुआ. उग्र प्रदर्शनकारियों ने सेना के ख़िलाफ़ पथराव को एक हथियार के तौर पर प्रयोग करना शुरू किया, जिसके जवाब में उन्हें गोलियों का सामना करना पड़ा. 85 लोगों के मारे जाने के बाद भी हालात क़ाबू में होते नज़र नहीं आ रहे हैं. इन गंभीर हालात पर सरकार और उसके विरोधियों के परस्पर विरोधी विचार हैं. सरकार का कहना है कि हिंसा को हवा देने में पाकिस्तान, कश्मीरी अलगाववादी संगठन और विपक्ष यानी महबूबा मुफ्ती की अध्यक्षता वाली पीडीपी का हाथ है. लेकिन विश्लेषकों, जिनमें भारत के कुछ प्रमुख पत्रकार और बुद्धिजीवी भी शामिल हैं, का मानना है कि घाटी में जारी सार्वजनिक प्रतिरोध दरअसल राज्य आतंकवाद की प्रतिक्रिया है.

मीडिया में इन दिनों यह सवाल भी चर्चा का विषय बना हुआ है कि क्या वर्तमान परिस्थितियां केंद्र और राज्य सरकारों की ओर से सियासी अपरिपक्वता का नतीजा हैं. आमराय तो यही है कि सरकार ने कश्मीरी जनता की जायज़ मांगों को मानने और उन पर अमल करने के बजाय बौद्धिक या अबौद्धिक तौर पर जनता को हार का एहसास कराने की कोशिश की. इसका एक तार्किक परिणाम यह हुआ कि जनता और सरकार के बीच नफ़रत और अविश्वसनीयता की गहरी खाई पैदा हो गई है. वर्ष 2004 में जब जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद का ग्राफ़ काफ़ी हद तक कम हो चुका था और पृथकतावादी राजनीतिक दलों के गठबंधन एवं हुर्रियत कांफ्रेंस के नरमपंथियों ने केंद्र सरकार के साथ वार्ता शुरू की थी तो यह आशा बंधी कि कश्मीर समस्या को हल करने के लिए कुछ ठोस क़दम उठाए जाएंगे, लेकिन ऐसा नहीं हुआ. मीरवाइज़ उमर फ़ारूक़ की अध्यक्षता में केंद्र सरकार के साथ कई दिनों तक वार्ता हुई, लेकिन नई दिल्ली ने राजनीतिक क़ैदियों की रिहाई और मानवाधिकारों के उल्लंघन पर रोक लगाने जैसी हुर्रियत नेताओं की मांगों पर ध्यान नहीं दिया. नतीजतन, हुर्रियत के नरमपंथी धड़े भी दिल्ली के राजनीतिज्ञों से नाराज़ हो गए. दूसरी ओर कश्मीर में वार्ता में शामिल होने वाले इन नेताओं पर दिल्ली के हाथों बिक जाने के आरोप लगाए गए. यही कारण है कि आज कश्मीर हिंसा की भट्ठी में जल रहा है और प्रधानमंत्री के निमंत्रण के बावजूद हुर्रियत के नरमपंथी नेता किसी भी तरह की बातचीत के लिए तैयार नहीं हो रहे हैं. 2008 में जब कश्मीर घाटी में अमरनाथ श्राइन बोर्ड को जंगली भूमि दिए जाने के विरोध में एक विवादित सार्वजनिक प्रदर्शन शुरू हुआ और लाखों लोग सड़कों पर निकल आए तथा घाटी में भारत विरोधी भावनाएं खुलकर उभरने लगीं तो नई दिल्ली ने एक बार फिर कुछ देर के लिए अलगाववादी नेताओं को क़रीब लाने के प्रयास किए, लेकिन जब हालात क़ाबू में आ गए और कुछ माह बाद हुए आम चुनावों में कश्मीर की 65 प्रतिशत आबादी शामिल हुई तो नई दिल्ली ने एक बार फिर कश्मीरी अलगाववादी दलों को नज़रअंदाज़ करना शुरू कर दिया.

चुनाव में लोगों के बड़ी संख्या में भाग लेने से यह लगा कि अब सब कुछ ठीक हो गया है, लेकिन यह सरकार का भ्रम साबित हुआ. उमर अब्दुल्ला की सरकार बनने के कुछ ही दिनों बाद दो महिलाओं के साथ बलात्कार और हत्या की घटना हुई तो सार्वजनिक विरोध-प्रदर्शनों का सिलसिला एक बार फिर शुरू हो गया. प्रतिक्रिया के तौर पर परंपरागत मासूम कश्मीरियों को अत्याचार और हिंसा का शिकार बनाया गया. वास्तविकता यह है कि सरकार हमेशा सार्वजनिक विरोध को दबाने के लिए ताक़त का दुरुपयोग करती है, जिसके चलते हालात बद से बदतर होते जा रहे हैं. इस साल की शुरुआत में ही वामिक और ज़ाहिद फ़ारूक़ जैसे मासूम बच्चों को मौत के घाट उतार दिया गया. लोग सरकार की इसी नीति को वर्तमान परिस्थितियों के लिए ज़िम्मेदार मान रहे हैं. नेशनल कांफ्रेंस एवं पीडीपी जैसे राजनीतिक दल भी अलगाववादियों के साथ गंभीरता के साथ वार्ता न करने और आम लोगों के ख़िलाफ़ ताक़त का दुरुपयोग करने पर टिप्पणी कर रहे हैं. मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला ने केंद्र सरकार से आर्म्ड फोर्सेज़ स्पेशल पावर एक्ट ख़त्म करने की मांग की. ज़ाहिर है, मुख्यमंत्री को ख़ुद भी यह एहसास है कि ताक़त का दुरुपयोग रोकने की आवश्यकता है. कट्टरपंथी दृष्टिकोण रखने वाले हुर्रियत नेता सैयद अली शाह गिलानी ने भी हाल में दिल्ली के साथ बातचीत के लिए जो पेशगी शर्तें रखी हैं, उनमें भी काले क़ानूनों का ख़ात्मा और फोर्सेज़ की वापसी की मांग शामिल है. आमराय तो यही है कि कश्मीरी जनता और नई दिल्ली के बीच बढ़ती खाई का बुनियादी सबब जनता के ख़िलाफ़ ताक़त का ज़्यादा से ज़्यादा प्रयोग करना है.

दूसरी ओर, अगर पाकिस्तान के संदर्भ में कश्मीरियों की बात करें तो जबसे पाकिस्तान के हालात ख़राब हुए हैं, तबसे कश्मीर के अंदर पाकिस्तान की लोकप्रियता में काफी कमी आई है. कोई भी कश्मीरी पाकिस्तान नहीं जाना चाहता. यहां के लोग आज़ादी चाहते हैं, लेकिन वे जानते हैं कि उन्हें पूर्ण आज़ादी नहीं मिल सकती. वे आज़ादी की मांग इसलिए कर रहे हैं, ताकि उन्हें कुछ विशेष अधिकार मिल जाएं. कश्मीरियों को मीडिया से भी शिक़ायत है. दुर्भाग्य से भारतीय मीडिया हालात का एक ही रुख़ दिखाता है, दूसरा रुख़ दिखाने की कोशिश ही नहीं करता. उर्दू मीडिया का रुख़ भी वैसा ही है. उसे लगता है कि अगर वह हक़ीक़त लिखेगा तो उस पर गद्दार-ए-वतन का आरोप लगा दिया जाएगा. कश्मीर के साथ एक अहम मसला यह भी है कि सेना यहां के मुख्यमंत्री का आदेश नहीं मानती. दो माह पूर्व मुख्यमंत्री ने गृहमंत्री को बताया कि सेना को नियंत्रित करना उनके वश में नहीं है. वह उनका आदेश नहीं मानती. यूनिफ़ाइड कमांड की बैठक में मुख्यमंत्री सेना और पुलिस को आदेश देते हैं कि फायरिंग न की जाए, लेकिन उस पर अमल नहीं किया गया. अगर किसी राज्य में हिंसा होती है तो प्रदर्शनकारियों पर पानी की बौछार की जाती है, लेकिन कश्मीर में सामने से गोलियां दाग़ी जाती हैं. मौजूदा हालात पर क़ाबू पाने के लिए आम नागरिकों या फिर पत्थर फेंकने वालों पर बंदूक़ चलाने का सिलसिला बंद किया जाना चाहिए. इसके अलावा केंद्र सरकार को ज़्यादा वक़्त ख़राब न करते हुए कश्मीर के अलगाववादी दलों के साथ गंभीर वार्ता शुरू कर देनी चाहिए. कश्मीरी जनता को फ़ौरन राहत पहुंचाने के लिए सेना की संख्या में कमी और राजनीतिक नज़रबंदों की रिहाई के अलावा काले क़ानूनों का ख़ात्मा जैसे क़दम उठाने की आवश्यकता है. इन्हीं क़दमों के माध्यम से नफ़रत और अविश्वसनीयता की वह खाई पाटने में मदद मिल सकेगी, जो इस वक़्त नई दिल्ली और कश्मीरी जनता के बीच हर गुज़रने वाले दिन के साथ बढ़ती जा रही है.

हारून रेशी (श्रीनगर से)
feedback@chauthiduniya.com

रेलवे भर्ती में छत्तीसगढ़ियों की उपेक्षा

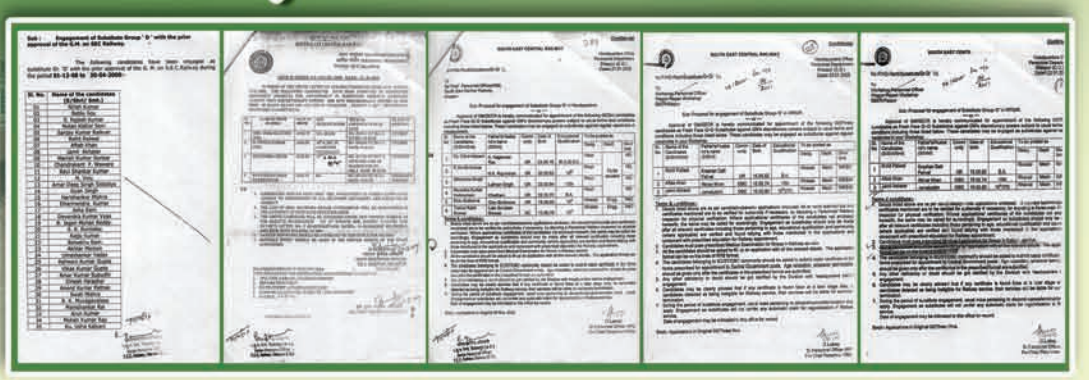

रेलवे में कर्मचारियों की भर्ती और विवादों के बीच चोली-दामन जैसा रिश्ता है, इसलिए कोई भी भर्ती बिना विवाद पूरी नहीं हो पा रही है. दक्षिण-पूर्व मध्य रेलवे में चार साल पहले गैंगमैन के 3016 पदों पर भर्तियां की गई थीं, जिसमें 4500 उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए बुलाया गया था. तब चयन सूची जारी होने के बाद जमकर विवाद हुआ था. कारण, सूची में बिहार के 2563, झारखंड के 700 और छत्तीसगढ़ के मात्र 327 लोगों का शामिल होना. प्रमाणपत्रों की जांच के दौरान कई बाहरी उम्मीदवारों के आठवीं कक्षा के अंकपत्र फ़र्ज़ी पाए गए थे. उक्त मुद्दे को लेकर आंदोलन हुआ था और साथ ही पूरे दस्तावेजों के साथ प्रधानमंत्री तक शिक़ायत भी की गई थी. इसे ध्यान में रखते हुए ज़ोन के तत्कालीन महाप्रबंधक पी सुधाकर ने गैंगमैन पद की भर्ती पर रोक लगा दी थी. मामला शांत होने पर छह माह बाद उसी सूची के आधार पर गैंगमैनों की भर्ती कर दी गई. इसी प्रकार आरपीएफ, चालक ग्रेड-3 की भर्ती भी विवादों में फंस गई थी. चालक ग्रेड-3 में अनुसूचित जनजाति वर्ग में भर्ती को लेकर विवाद हुआ था. इसमें दस्तावेजों के परीक्षण के लिए चौबीस उम्मीदवारों को बुलाया गया, जिसमें 21 मीणा जाति के थे और राजस्थान के रहने वाले थे. उक्त वर्ग में मात्र 3 नाम छत्तीसगढ़ के थे. यह भी सुनने में आया कि उक्त रिक्त पदों पर भर्ती के लिए प्रति अभ्यर्थी 2 से 3 लाख रुपये तक वसूले गए थे.

शिवा कुमार

दक्षिण-पूर्व मध्य रेलवे मज़दूर संघ ने सूचना का अधिकार क़ानून का सहारा लेकर खुलासा किया कि पिछले दरवाजे से चालीस से अधिक लोगों की भर्ती कर ली गई. इस खुलासे के बाद महकमे में हड़कंप मच गया. रेलवे मजदूर संघ ने इस भर्ती के लिए रेल महाप्रबंधक को ज़िम्मेदार ठहराते हुए आंदोलन की घोषणा की और कार्यालय के सामने धरना-प्रदर्शन किया, जिसमें तीन मंडलों के तक़रीबन 5000 से अधिक कर्मचारियों-बेरोज़गार युवकों ने भाग लिया. जांच में पाया गया कि इन नियुक्तियों के लिए साक्षात्कार ही नहीं लिया गया. सारी नियुक्तियां पिछले दरवाजे से कर ली गईं. आरटीआई के माध्यम से जो सूचना प्राप्त हुई, उसके मुताबिक़, रेलवे बोर्ड के नियमों को दरकिनार करते हुए एक दिसंबर, 2008 से 30 फरवरी, 2009 के बीच 40 से ज़्यादा लोगों की पिछले दरवाजे से भर्ती की गई थी. जबकि सर्कुलर क्रमांक पीएचक्यू/रूलिंग/ रिक्रूटमेंट/182/2559 दिनांक 09 जुलाई 2009 के अनुसार, जीएम कोटे के तहत किसी एमएलए, एमपी या किसी संगठन की अनुशंसा पर भर्ती की जाए, ऐसा कहीं नहीं लिखा है. मगर महाप्रबंधक द्वारा 40 से ज़्यादा लोगों की नियुक्ति एमएलए, एमपी एवं विभिन्न संगठनों के पदाधिकारियों की अनुशंसा का हवाला देते हुए कर दी गई. इसी प्रकार 2009 में पर्सनल डिपार्टमेंट द्वारा भी भर्तियां की गईं. मज़दूर संघ ने मांग की कि जब जीएम ने उक्त नियुक्तियां एमएलए, एमपी एवं विभिन्न संगठनों के पदाधिकारियों की अनुशंसा पर की है तो अनुशंसा करने वालों के नाम बताए जाएं, लेकिन जीएम ने अपने जवाब में किसी के नाम का खुलासा नहीं किया. संघ ने आरोप लगाया कि नियुक्तियों में बाहरी लोगों को प्राथमिकता मिल रही है और छत्तीसगढ़ के बेरोज़गारों के साथ धोखा किया जा रहा है. इन नियुक्तियों के साथ-साथ यह भी जांच का विषय है कि रेलवे की विभिन्न यूनियनों के उच्च पदाधिकारियों द्वारा अपने रिश्तेदारों एवं अन्य लोगों की नियुक्तियां कराई जाती हैं.

छत्तीसगढ़ की उपेक्षा का आलम यह है कि 24 फरवरी, 2010 के रोज़गार और नियोजन नामक अख़बार में रेल मंत्रालय द्वारा विभिन्न जोनों में भर्ती हेतु प्रकाशित विज्ञापन में स्थानीय भाषा वाले खंड में जहां मराठी एवं उड़िया भाषा को शामिल किया गया है, वहीं छत्तीसगढ़ी लापता है. अधिकारियों का तर्क है कि आठवीं अनुसूची में छत्तीसगढ़ी को शामिल नहीं किया गया है. इसके बावजूद कोई आवाज़ उठाता नहीं दिख रहा है. यहां रेल जाल न फैले होने से भी समस्याएं पैदा हो रही हैं. आज दल्लीराजहरा लाइन को रावघाट तक ही नहीं, बल्कि जगदलपुर और कांकेर को भी किसी नज़दीकी सुविधाजनक जंक्शन से जोड़ने की ज़रूरत है. इसी तरह बीजापुर ज़िले को भी दिल्ली-चेन्नई मुख्य लाइन से जोड़ा जा सकता है. धमतरी-रायपुर लाइन को ब्रॉडगेज में बदला जाना भी बस्तर कमिश्नरी के लिए फ़ायदेमंद होगा, क्योंकि वर्तमान में निकटतम रेलवे स्टेशन धमतरी है. रेल आने से रोज़गार बढ़ेगा, आवागमन आसान होगा और मालभाड़ा ट्रकों के मुक़ाबले कम हो जाएगा, लेकिन कोई भी नेता आवाज़ नहीं उठा रहा. विगत दिनों जैपोर-उड़ीसा के विधायक रविनारायण नंद ने जगदलपुर के कुछ लोगों के सहयोग से ज़ोरदार आंदोलन छेड़ा तो मजबूर होकर रेल मंत्रालय हीराखंड एक्सप्रेस को कोरापुट से जैपोर होकर जगदलपुर तक बढ़ाने के लिए विवश हो गया. ऐसा कुछ हमारे जनप्रतिनिधि क्यों नहीं करते? यदि इन लोगों ने बजट से पहले कुछ सक्रियता दिखाई होती तो बस्तर अंचल को एक नई लाइन या ट्रेन ज़रूर मिल जाती, लेकिन न तो रोज़गार दिया जा रहा है, न ट्रेन और न ही भाषा को तवज्जो.

feedback@chauthiduniya.com

रेलवे ज़ोन बनने के बाद से यहां हो रही भर्तियों में भ्रष्टाचार व्याप्त है. छत्तीसगढ़ियों को प्राथमिकता नहीं दी जा रही है.
-रवींद्र सिंह

रेल ज़ोन होने के बाद भी बिलासपुर के लोगों को भर्तियों में प्राथमिकता नहीं दी जा रही है और उन्हें छला जा रहा है.
-बसंत शर्मा

बिलासपुर को रेलवे ज़ोन बनाने के लिए स्थानीय लोगों ने अहम भूमिका निभाई, ताकि उन्हें रोज़गार मिले. मगर ऐसा हुआ नहीं. ग्रुप डी की भर्तियों में स्थानीय लोगों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए.
-व्ही. रामाराव

रेलवे की भर्तियों में स्थानीय बेरोज़गारों को 60 प्रतिशत आरक्षण मिलना चाहिए और छत्तीसगढ़ियों के लिए स्थायी तौर पर कोटा होना चाहिए.
-सुशांत शुक्ला

सांप्रदायिक दंगों के मामले में सरकार की इच्छाशक्ति का बहुत महत्व होता है. यह खेदजनक है कि उदयपुर के उन दोषी अधिकारियों के ख़िलाफ़ कोई कार्यवाही नहीं की गई, जिनकी उपस्थिति में मुसलमानों के घर लूटे और जलाए गए.

उदयपुर सांप्रदायिक दंगा

राजस्थान पुलिस ने गुजरात दोहराया

जब तक सरकार नहीं चाहेगी, तब तक किसी राज्य में कभी कोई दंगा या बड़ी सांप्रदायिक घटना नहीं हो सकती. बिहार और पश्चिम बंगाल इसके सबसे अच्छे उदाहरण हैं. मुस्लिम और यादव वोटों के सहारे सत्ता में आने के बाद लालू यादव ने बहुत आसानी से राज्य में सांप्रदायिक हिंसा पर नियंत्रण पा लिया था. उन्होंने साफ कर दिया कि अगर चौबीस घंटे के भीतर सांप्रदायिक हिंसा पर नियंत्रण नहीं पाया गया तो संबंधित पुलिस अधिकारियों को तुरंत निलंबित कर दिया जाएगा.

डॉ. असगर अली इंजीनियर

पीयूसीएल (पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज) की राजस्थान के उदयपुर ज़िले के सारदा नामक क़स्बे में हुई सांप्रदायिक हिंसा की जांच रिपोर्ट मेरे सामने है. यह हिंसा एक मीणा आदिवासी की हत्या के बाद भड़की. यह हत्या विशुद्ध आपराधिक थी. पीयूसीएल के दल में वरिष्ठ अधिवक्ता रमेश नंदवाना, विनीता श्रीवास्तव, अरुण व्यास, श्यामलाल डोगरा, श्रीराम आर्य, हेमलता, राजेश सिंह एवं रशीद शामिल थे. इस क़स्बे में कुछ वर्ष पहले भी सांप्रदायिक हिंसा हुई थी. रिपोर्ट के अनुसार, 2 जुलाई को शहजाद ख़ान और उसके दो साथियों ने मोहन मीणा का कत्ल कर दिया. मोहन मीणा अवैध शराब का धंधा करता था और शराब पीने के बाद हुए झगड़े में उसका ख़ून हो गया. इसके बाद तीन दिनों तक (3 से 5 जुलाई) आदिवासियों ने योजनाबद्ध तरीक़े से मुसलमानों की दुकानों में जमकर आगजनी की. जिन मुसलमानों की दुकानें जलाई गईं, उनका हत्या से कोई लेना-देना नहीं था. फिर आठ जुलाई को निकटवर्ती बोरीपाल के भाजपा नेता अमृतलाल मीणा और उनके साथियों ने घोषणा की कि मुस्लिम परिवारों का नाश करना उनका प्राथमिक लक्ष्य है.

क्षेत्र के एसडीएम एवं पुलिस उपाधीक्षक ने दोनों पक्षों की बैठक बुलाई और समस्या का हल निकालने की पेशकश की. बैठक में आदिवासियों के प्रतिनिधियों, जो सभी बजरंगदल के सदस्य थे, ने कहा कि वे मुस्लिम परिवारों का नाश करने का अपना इरादा तभी त्यागेंगे, जब स्थानीय मुसलमान यह घोषणा करें कि वे मोहनलाल मीणा की हत्या में शामिल तीनों आरोपियों का पूर्णत: बहिष्कार करेंगे और इस आशय की सूचना अख़बारों में छपवाई जाएगी. यद्यपि इस मांग की कोई क़ानूनी वैधता नहीं थी और आरोपियों पर क़ानून के अनुसार मुक़दमा चलाया जाना चाहिए था, परंतु शांति बनाए रखने की खातिर स्थानीय मुसलमानों ने इस मांग को स्वीकार कर लिया. तीनों आरोपियों को बिरादरी से बाहर करने की घोषणा कर दी गई. इस बारे में सारदा के तहसीलदार को आधिकारिक रूप से सूचित किया गया और उदयपुर से प्रकाशित एक राष्ट्रीय दैनिक में यह ख़बर छपवाई गई. पीयूसीएल की रिपोर्ट के अनुसार, हिंदू संगठनों के बहकावे में आकर आदिवासियों ने अपना वादा नहीं निभाया और 18 जुलाई को क़स्बे में बड़े पैमाने पर ऐसे पर्चे बांटे गए, जिनमें कहा गया कि आदिवासी मुस्लिम परिवारों के ख़िलाफ़ अपनी लड़ाई जारी रखेंगे. पीयूसीएल ने ऐसे सुबूत इकट्ठे किए हैं, जिनसे यह ज़ाहिर होता है कि 18 से 24 जुलाई के बीच विभिन्न संगठनों द्वारा क्षेत्र के आदिवासियों को हथियार बांटे गए. रिपोर्ट के अनुसार, पालसारदा, पालसाईपुर सहित कई गांवों में सेवानिवृत्त शिक्षक धनराज मीणा एवं पंचायत के उपसचिव कालू शंकर मीणा ने हथियार बांटे.

सारदा के मुसलमानों को जब इस घटनाक्रम का पता लगा तो उन्होंने उच्चाधिकारियों एवं स्थानीय नेताओं को इसकी जानकारी दी और अनुरोध किया कि क़स्बे में सुरक्षा के कड़े प्रबंध किए जाएं. इसके बाद 25 जुलाई को अपरान्ह लगभग चार बजे बड़ी संख्या में आदिवासी एक छात्रावास के नज़दीक इकट्ठा हुए और मुसलमानों की दुकानों और मकानों पर हमले करने लगे. इनमें से एक मकान सेवानिवृत्त प्राचार्य अहमद हुसैन का था, जिन्हें पत्थरबाज़ी में गंभीर चोटें भी आईं. यह अफवाह फैलाई गई कि एक मुस्लिम ने आदिवासियों पर गोली चला दी, परंतु बाद में पुलिस ने इस अफवाह को सही नहीं पाया. आदिवासी ढोल बजाते हुए इकट्ठा होकर अपने साथियों को मुसलमानों पर हमला करने के लिए उकसा रहे थे, परंतु प्रशासन ने कोई कार्यवाही नहीं की. आदिवासी मुस्लिम मुहल्लों पर हमले करते रहे. सुरक्षा के लिए पुलिस मुसलमानों को थाने ले आई. मौक़ा पाकर आदिवासियों ने खाली घरों को जमकर लूटा और उनमें आग लगा दी. ऐसे घरों की संख्या लगभग 70 बताई जाती है. सबसे दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि ज़िला प्रशासन ने हिंसा को रोकने के लिए कोई कदम नहीं उठाया. जिस समय मुसलमानों के घर जलाए जा रहे थे, उस समय सारदा में ज़िला मजिस्ट्रेट, पुलिस अधीक्षक एवं अन्य अधिकारी मौजूद थे. ज़िले के उक्त शीर्ष अधिकारी आदिवासियों द्वारा मुसलमानों के घरों को लुटता-फुंकता देखते रहे.

चौंकाने वाली बात यह है कि इन अधिकारियों के ख़िलाफ़ आज तक राज्य के मुख्यमंत्री या गृहमंत्री द्वारा कोई कार्यवाही नहीं की गई है. मेरे निवेदन पर मुसलमानों का एक उच्चस्तरीय प्रतिनिधिमंडल प्रोफेसर मोहम्मद हसन एवं प्रोफेसर सलीम इंजीनियर के नेतृत्व में दो दंगापीड़ितों के साथ मुख्यमंत्री से मिला और उनसे अनुरोध किया गया कि वह ज़िले के उन उच्चाधिकारियों को निलंबित करें, जिनकी आंखों के सामने मुसलमानों के 70 घर लूटे-जलाए गए. मुख्यमंत्री ने कहा कि वह संभागायुक्त से मामले की जांच कराएंगे. राजस्थान में कांग्रेस की सरकार है. मुसलमानों ने पिछले चुनाव में कांग्रेस को अपना पूरा समर्थन दिया था, क्योंकि उन्होंने राज्य में भाजपा शासन के दौरान हुए भगवाकरण को देखा और भुगता था. गुजरात के दंगों के प्रकाश में कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार सांप्रदायिक हिंसा विधेयक तैयार कर रही है, ताकि भविष्य में गुजरात जैसी घटनाएं न हों. लेकिन दु:ख की बात यह है कि जब मुसलमानों के घर जलाए-लूटे जा रहे थे, तब वहां जिले के आला अधिकारियों के अलावा एक कांग्रेस विधायक भी मौजूद था. यह विधायक भी मीणा आदिवासी है. क्या केंद्र सरकार वाकई सांप्रदायिक हिंसा पर रोक लगाने की इच्छुक है? उदयपुर के अधिकारियों ने जिस तरह का व्यवहार किया, उससे कई प्रश्न उभरते हैं. क्या मुख्यमंत्री को इस गंभीर घटना की जानकारी नहीं थी? अगर नहीं तो संबंधित अधिकारियों ने उन्हें अंधेरे में क्यों रखा और यदि हां तो फिर मुख्यमंत्री ने दोषी अधिकारियों के विरुद्ध त्वरित और कड़ी कार्यवाही क्यों नहीं की?

गुजरात में पुलिस ने दंगाइयों का साथ दिया था. क्या कांग्रेस शासित राजस्थान की पुलिस का व्यवहार कुछ अलग था? यह तर्क दिया जा सकता है कि गुजरात में जो कुछ हुआ, उसे सरकार का अपरोक्ष समर्थन हासिल था. राजस्थान के मामले में शायद ऐसा नहीं रहा होगा, परंतु क्या हम यह उम्मीद नहीं कर सकते कि मुख्यमंत्री को अधिक सतर्क रहना था और सांप्रदायिक सोच वाले अधिकारियों के ख़िलाफ़ कठोर कार्यवाही करनी थी. जब तक सरकार नहीं चाहेगी, तब तक किसी राज्य में कभी कोई दंगा या बड़ी सांप्रदायिक घटना नहीं हो सकती. बिहार और पश्चिम बंगाल इसके सबसे अच्छे उदाहरण हैं. मुस्लिम और यादव वोटों के सहारे सत्ता में आने के बाद लालू यादव ने बहुत आसानी से राज्य में सांप्रदायिक हिंसा पर नियंत्रण पा लिया था. उन्होंने साफ कर दिया कि अगर चौबीस घंटे के भीतर सांप्रदायिक हिंसा पर नियंत्रण नहीं पाया गया तो संबंधित पुलिस अधिकारियों को तुरंत निलंबित कर दिया जाएगा. उन्होंने यादवों को भी चेतावनी दी कि अगर वे सत्ता का मजा लूटते रहना चाहते हैं तो सांप्रदायिक हिंसा भड़काने या उसमें भाग लेने से बाज आएं.

लालू यादव के 15 वर्षीय शासनकाल में बिहार में एक भी सांप्रदायिक दंगा नहीं हुआ. चूंकि नीतीश कुमार मुसलमानों को लालू शिविर से अपने शिविर में लाना चाहते हैं, इसलिए उन्होंने भी अब तक बिहार को दंगामुक्त राज्य बना रखा है. यही नहीं, मुसलमानों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए नीतीश कुमार ने यह सुनिश्चित किया कि भागलपुर दंगों के दोषियों को सज़ा मिले. लालू ने इस काम में कोई रुचि इसलिए नहीं ली थी, क्योंकि अधिकांश आरोपी यादव थे. इसी तरह एक समय पश्चिम बंगाल सांप्रदायिक हिंसा का बड़ा केंद्र था, परंतु वाममोर्चा सरकार ने सत्ता में आते ही एक सर्कुलर जारी किया कि जो पुलिस अधिकारी 24 घंटे के भीतर सांप्रदायिक हिंसा रोकने में विफल रहते हैं, उन्हें स्वयं को निलंबित समझना चाहिए. पश्चिम बंगाल में वाममोर्चा तीस वर्षों से भी अधिक समय से शासन कर रहा है, परंतु इस अवधि में राज्य में एक भी सांप्रदायिक दंगा नहीं हुआ. एकमात्र अपवाद मुर्शिदाबाद में हुई सांप्रदायिक हिंसा थी, जिस पर बहुत जल्दी नियंत्रण पा लिया गया था.

सांप्रदायिक दंगों के मामले में सरकार की इच्छाशक्ति का बहुत महत्व होता है. यह खेदजनक है कि उदयपुर के उन दोषी अधिकारियों के ख़िलाफ़ कोई कार्यवाही नहीं की गई, जिनकी उपस्थिति में मुसलमानों के घर लूटे और जलाए गए. राजस्थान में दस वर्ष तक भाजपा का शासन रहा. इस दौरान संघ की पृष्ठभूमि और मानसिकता वाले राज्य पुलिस-प्रशासनिक सेवाओं के अनेक अधिकारियों को आईएएस एवं आईपीएस में पदोन्नत किया गया. इससे राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था चरमरा गई और आरएसएस, विहिप एवं बजरंग दल आदि जैसे संगठनों की ताकत में ज़बरदस्त वृद्धि हुई. जैसा कि हम जानते हैं कि पिछले कुछ दशकों से आरएसएस आदिवासी क्षेत्रों में बहुत सक्रियता से काम कर रहा है और आश्चर्य नहीं कि मुसलमानों के घरों में लूटपाट-आगजनी करने वाले आदिवासी हिंदू संगठनों के सदस्य थे. राजस्थान के मुख्यमंत्री की छवि एक धर्मनिरपेक्ष नेता की है. वह निश्चित रूप से इन सभी तथ्यों से अवगत होंगे और उन्हें ज़िला स्तर के अधिकारियों को स्पष्ट शब्दों में यह संदेश देना चाहिए कि पुलिस-प्रशासन में सांप्रदायिकता को कतई बर्दाश्त नहीं किया जाएगा. अपनी धर्मनिरपेक्ष छवि के कारण राजस्थान में भाजपा के कई वर्षों के कुशासन के बाद कांग्रेस सत्ता में आई है और उसे राज्य प्रशासन को सांप्रदायिक तत्वों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए तत्परता से कदम उठाने चाहिए. खेद का विषय है कि यह तत्परता कहीं दिखाई नहीं दे रही है.

मुस्लिम बुद्धिजीवियों को सांप्रदायिक सद्भाव-शांति बनाए रखने में अधिक सक्रिय भूमिका निभानी होगी और सरकार को इस बात के लिए मजबूर करना होगा कि वह दोषी अधिकारियों के विरुद्ध कार्यवाही करे. मुख्यमंत्री को यह सुनिश्चित करना होगा कि सांप्रदायिक मानसिकता वाले अधिकारियों को हटाया जाए और उनके स्थान पर धर्मनिरपेक्ष एवं उदार सोच वाले ऐसे अधिकारियों की पदस्थापना की जाए, जो सांप्रदायिक सद्भाव और शांति को बढ़ावा दें. अगर उदयपुर के ज़िला मजिस्ट्रेट और पुलिस अधीक्षक को तुरंत निलंबित कर दिया जाता है तो नौकरशाही तक सही संदेश जाएगा. अगर ऐसा नहीं किया गया तो फिरकापरस्त नौकरशाहों की हिम्मत बढ़ेगी और राजस्थान को दूसरा गुजरात बनने में देर नहीं लगेगी. भाजपा यही चाहती है. उसने अपने दस वर्ष के शासन में सांप्रदायिकता का मूलभूत ढांचा खड़ा कर दिया है. अभी भी देर नहीं हुई है. अगर मुख्यमंत्री अपनी छवि को बेदाग बनाए रखना और कांग्रेस को एक धर्मनिरपेक्ष दल के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं तो उन्हें चुप नहीं बैठना चाहिए. मैं चालीस साल से सांप्रदायिक सद्भाव के लिए काम कर रहा हूं और मेरा यह अनुभव है कि धर्मनिरपेक्षता के प्रति कांग्रेस की सैद्धांतिक प्रतिबद्धता है, परंतु वह अक्सर आकार नहीं ले पाती. इसके विपरीत जनता दल, आरजेडी एवं अन्य पार्टियां सांप्रदायिकता के ख़िलाफ़ बोलती हैं और उससे लड़ती भी हैं.

(लेखक जाने-माने इस्लामिक विद्वान हैं)

feedback@chauthiduniya.com

प्राथमिक और माध्यमिक कक्षाओं में बच्चों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से लागू की गई मध्यान्ह भोजन योजना के क्रियान्वयन में लापरवाही बरतने के अनेक उदाहरण देखने को मिल रहे हैं.

उत्तर प्रदेश

प्राथमिक शिक्षा की तस्वीर नहीं बदली

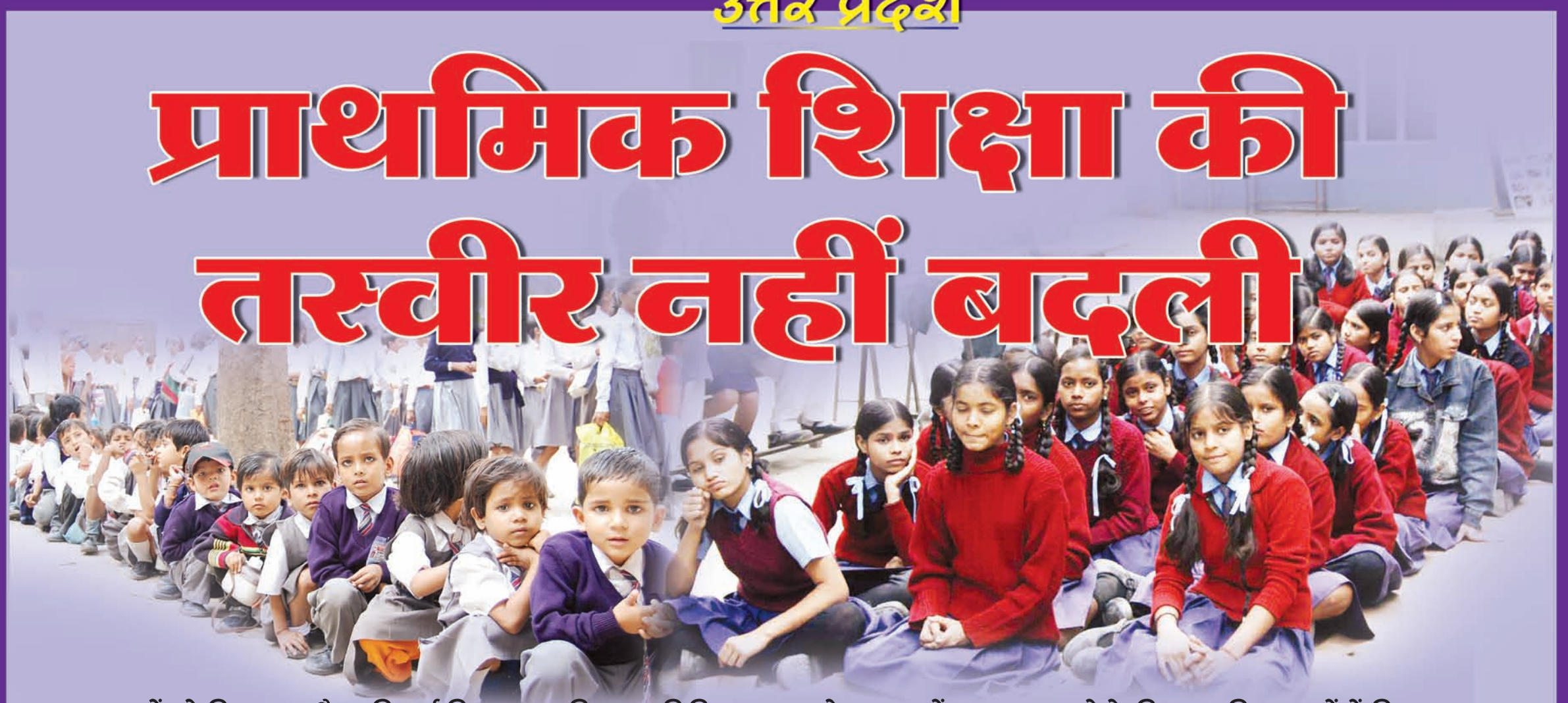

बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रावधानों पर अमल करने के लिए प्राथमिक स्कूलों में फ़िलहाल 3.25 लाख और उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए 65,000 शिक्षकों की ज़रूरत है. प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति के लिए निर्धारित न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता बीटीसी प्रशिक्षित स्नातक है.

सुरेंद्र अग्निहोत्री

सिर्फ़ 5200 रुपये में बेच डाला स्कूल पढ़कर आपको आश्चर्य होगा, लेकिन जनपद सुल्तानपुर के गौरीगंज इलाक़े के भटगवां प्राइमरी स्कूल भवन को ग्रामप्रधान ने बेसिक शिक्षा विभाग को सूचना दिए बिना 5200 रुपये में बेचकर जता दिया है कि प्रदेश में शिक्षा का क्या हाल है. वर्ष 2008 की यह घटना जब प्रकाश में आई तो बेसिक शिक्षा विभाग को सांप सूंघ गया. कानपुर में 335 प्राथमिक स्कूल हैं और छात्रों की संख्या 25,000 से अधिक है, लेकिन शिक्षक 274 हैं. यानी एक स्कूल को एक टीचर भी मयस्सर नहीं है. राजधानी लखनऊ से लगे अर्जुनगंज इलाक़े में हसनपुर खेवली प्राथमिक विद्यालय में छात्राएं मिड डे मील स्वयं बनाती हैं. सरोजिनी नगर विकासखंड के गांव निजामपुर मझगवा के प्राथमिक विद्यालय के छात्र-छात्राओं को मिड डे मील नसीब नहीं. बगियामऊ प्राथमिक विद्यालय में गायों एवं कुत्तों ने अपना डेरा डाल रखा है. बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित 14,274 स्कूलों में एक-एक शिक्षक तैनात है. 1386 स्कूलों में एक भी शिक्षक नहीं है. 201 विद्यालय भवनविहीन हैं यानी वे खुले आसमान के नीचे चलते हैं. जहां शिक्षा के प्रति इतनी लापरवाही हो, वहां शिक्षा के अधिकार अधिनियम को अमलीजामा पहनाना कितना कठिन होगा, यह समझना बहुत आसान है.

बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रावधानों पर अमल करने के लिए प्राथमिक स्कूलों में फ़िलहाल 3.25 लाख और उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए 65,000 शिक्षकों की ज़रूरत है. प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति के लिए निर्धारित न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता बीटीसी प्रशिक्षित स्नातक है. सूबे के 70 ज़िलों में शिक्षण एवं प्रशिक्षण संस्थानों में 14,400 सीटें हैं और बीटीसी के लिए संबद्धता प्राप्त निजी कॉलेजों में 2150 सीटें. ऐसे में इतने शिक्षक कैसे तैयार होंगे, यह एक बड़ा सवाल खड़ा हो गया है. शिक्षामित्रों के सहारे शिक्षा की नाव किस डगर पर पहुंचेगी, कहना कठिन है. मिड डे मील व्यवस्था में लापरवाही के चलते अनगिनत अवरोध खड़े हो गए हैं. रसोइए की नियुक्ति में खासतौर पर एक जाति विशेष के चयन का शासनादेश जारी करके सियासी चौसर बिछाई गई थी, लेकिन कन्नौज, औरैया एवं रमाबाई नगर में हुए विवाद के बाद इसे वापस ले लेने से मामला भले ही कुछ देर के लिए थम गया हो, लेकिन इन घटनाओं ने सोशल इंजीनियरिंग के फार्मूले को तहस नहस कर दिया. प्राथमिक विद्यालयों में मिड डे मील के नाम पर सूड़ियों वाला भोजन मिलना आम बात हो गई है. इटावा में पिछले दिनों ग्राम पचावली स्थित पूर्व माध्यमिक विद्यालय में मिड डे मील के चावल में सूड़ियां पाई गईं. चित्रकूट के खोयेपुरवा, माधोपुर, ओमनाथ पुरवा में बच्चों को दूषित मिड डे मील खाने के लिए मजबूर किया गया. आगरा के ग्राम धनौली में मिड डे मील के नाम पर बासी खाना परोसा गया. बलिया में ख़राब खाना खाने से अनेक बच्चे बीमार हो गए. सुल्तानपुर के जयसिंहपुर क्षेत्र के प्राथमिक विद्यालय मुगर में पढ़ रहे तनरहैया गांव निवासी मुस्तकीम के दो बच्चों जाहिद अली एवं सूफी की वर्ष 2009 के अक्टूबर माह में मिड डे मील खाने से मौत होने का समाचार आया था.

मिड डे मील के नाम पर बच्चों को घर से कटोरा लेकर स्कूल आने के लिए बाध्य करके मास्टरों ने एक सामाजिक जंग सी छेड़ दी है. सम्मान की इस लड़ाई में ग़रीबों के बच्चे भी अब आर-पार के मूड में हैं. बच्चों के मुंह का निवाला छीनने वाले नौ ग्रामप्रधानों पर प्रशासन का शिकंजा कसता जा रहा है. इनमें से एक ग्राम पंचायत पर एफआईआर दर्ज कराकर प्रशासन ने जता दिया कि शासन की योजना से खिलवाड़ करना अब आसान नहीं होगा. आठ ग्राम पंचायतों पर कार्यवाही होनी शेष है. उल्लेखनीय है कि परिषदीय विद्यालयों के बच्चों को कुपोषण से बचाने और विद्यालय में उनका अधिक से अधिक ठहराव सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा मध्यान्ह भोजन योजना लागू की गई थी. बच्चों के हिस्से का भोजन हजम करने वाले इन ग्रामप्रधानों की करतूतों की जानकारी जब ज़िलाधिकारी रणवीर प्रसाद को हुई तो उन्होंने इस मामले को गंभीरता से लिया और उन ग्राम पंचायतों की सूची मांगी, जहां मध्यान्ह भोजन योजना में भारी गड़बड़ी हुई. शिक्षा विभाग द्वारा ऐसी नौ ग्राम पंचायतों की सूची ज़िलाधिकारी को उपलब्ध कराई गई, जिन पर मध्यान्ह भोजन योजना के लाखों रुपये बकाया थे. ज़िलाधिकारी ने मामले को ज़िला पंचायतराज अधिकारी को सौंपते हुए जांच के बाद दोषी ग्रामप्रधानों के ख़िलाफ़ कठोर कार्यवाही के निर्देश दिए.

प्राथमिक और माध्यमिक कक्षाओं में बच्चों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से लागू की गई मध्यान्ह भोजन योजना के क्रियान्वयन में लापरवाही बरतने के अनेक उदाहरण देखने को मिल रहे हैं. योजना के तहत छात्रों को पांच-छह सौ कैलोरी का भोजन उपलब्ध कराने का प्रावधान है, लेकिन स्वयंसेवी संस्थाओं, ग्रामप्रधानों एवं शिक्षकों की तिकड़ी साठगांठ करके बच्चों के मुंह से निवाला छीनने के लिए नई-नई तरकीबें ईजाद कर रही है. भोजन के लिए खाद्यान्न और सब्जियों की ख़रीद में हो रहे घपलों, खाना तैयार करने और परोसने में हो रही लापरवाहियों के इतने ज़्यादा किस्से हैं कि बच्चों और अभिभावकों में भय का वातावरण बनता जा रहा है. दोपहर भोजन के नाम पर प्रबंधन से जुड़े लोग जमकर कमाई कर रहे हैं. प्राथमिक शिक्षा की तस्वीर बदलने के लिए पिछले डेढ़ दशकों में चार महत्वपूर्ण योजनाएं शुरू की गईं, लेकिन उक्त सभी योजनाएं अपने लक्ष्य से भटकती नज़र आ रही हैं. प्रदेश में वर्तमान में लगभग डेढ़ लाख प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्कूल हैं. इनमें लगभग तीन लाख से ज़्यादा शिक्षक एवं शिक्षामित्र नियुक्त हैं. प्राथमिक शिक्षा का बजट इतना ज़्यादा है कि समय से ख़र्च करने के लिए लगातार निर्देश मिलने के बावजूद लक्ष्य अभी भी बहुत दूर है. सर्वशिक्षा अभियान के अधिकारी ख़ुद यह स्वीकार करते हैं. लक्ष्य पाने के लिए तैयार की गई कार्ययोजना से जुड़ी एक संक्षिप्त रिपोर्ट में भी इस सच को स्वीकार किया गया है. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षित स्नातक एसोसिएशन के प्रांतीय अध्यक्ष विनय सिंह कहते हैं कि आज जो भी योजनाएं बनती हैं, उनके मूर्त रूप में आने से पूर्व ही बजट का व्यापक पैमाने पर बंदरबांट हो जाता है, जिसके चलते सारी योजनाएं फिसड्डी साबित हो रही हैं.

उत्तर प्रदेश में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अंतर्गत विश्व बैंक की पोषित परियोजना (बीईपी), ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी प्रथम व द्वितीय), वर्ष 2001 से 16 ज़िलों में सर्वशिक्षा अभियान आदि योजनाएं इस उम्मीद से शुरू की गईं कि प्रत्येक बच्चे तक प्राथमिक शिक्षा पहुंचेगी और स्कूलों में बच्चों का ठहराव बढ़ने के साथ ही गुणवत्ता में भी सुधार होगा. रिपोर्ट में लक्ष्य हासिल न होने के लिए शिक्षकों-भौतिक संसाधनों की कमी और सामाजिक उदासीनता को ज़िम्मेदार ठहराया गया है. सर्वशिक्षा अभियान अब प्रदेश के सभी ज़िलों में संचालित है. अभियान की योजनाओं के बेहतर क्रियान्वयन के लिए राजस्व संदर्भ समूह (स्टेट रिसोंस ग्रुप) बनाया गया है. समूह का मुख्य काम प्रारंभिक शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाना, छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के मापन-मूल्यांकन के लिए परामर्श एवं सहयोग, शिक्षकों का प्रशिक्षण, राज्यस्तरीय शोध, सर्वेक्षणों का आयोजन, ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों (डायट), बीआरसी, एनपीआरसी आदि में चल रहे शैक्षिक कार्यों की मॉनीटरिंग करना आदि है.

बेसिक शिक्षा मंत्री डॉ. धर्म सिंह सैनी के अनुसार, प्रदेश में बीएड बेरोज़गारों को सरकारी नौकरी में लिए जाने के संबंध में कोई नीति निर्धारित नहीं है. विशिष्ट परिस्थितियों में वर्ष 1998, 2004 एवं 2007 में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के अनुमोदन पर बीएड, एलटी, बीपीएड, डीपीएड एवं सीपीएड योग्यताधारी अभ्यर्थियों को विशिष्ट बीटीसी प्रशिक्षण कराकर सेवायोजित किया गया. प्राथमिक शिक्षा का स्तर सुधारने हेतु सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत प्रदेश में 88,000 अध्यापकों की भर्ती की गई है, जिनमें से 70,000 अध्यापकों की तैनाती की जा चुकी है और शेष प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं. नवीन प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय स्थापित किए गए हैं और अतिरिक्त कक्ष निर्मित कराए गए हैं. विकास एवं रखरखाव हेतु विद्यालयों को अनुदान दिया जाता है. राज्य सरकार एवं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद द्वारा विकसित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 के परिप्रेक्ष्य में कक्षा 1 से 8 तक का पाठ्यक्रम पुनरीक्षित किया जा चुका है और नवीन पाठ्य पुस्तकें लागू की जा चुकी हैं. कक्षा 1 से 8 तक के बच्चों को नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें और कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों को भाषा एवं गणित में अभ्यास के अवसर प्रदान करने के लिए नि:शुल्क कार्यपुस्तिकाएं उपलब्ध कराई जाती हैं. शिक्षकों की क्षमता संवर्द्धन हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं. इसके अलावा वर्ष 2010-11 में अधिगम अभिवृद्धि कार्यक्रम (लर्निंग इन्हैंसमेंट प्रोग्राम) के अंतर्गत सुनियोजित प्रयास किए जा रहे हैं. इसके तहत कक्षा 1 एवं 2 के बच्चों में पठन कौशल एवं गणितीय दक्षता विकास हेतु कार्यक्रम संचालित किया गया है. उच्च प्राथमिक स्तर पर कक्षा 6 एवं 7 के बच्चों को प्रयोग, गतिविधि एवं प्रदत्त कार्यों द्वारा विज्ञान और गणित सीखने हेतु रुचिपूर्ण कार्यक्रम संचालित किया गया है. सरकारी रिकार्ड के मुताबिक़ प्रदेश का कोई भी विद्यालय बंद नहीं है. सभी विद्यालयों में शिक्षण कार्य चालू है.

मिड डे मील के नाम पर बच्चों को घर से कटोरा लेकर स्कूल आने के लिए बाध्य करके मास्टरों ने एक सामाजिक जंग सी छेड़ दी है. सम्मान की इस लड़ाई में ग़रीबों के बच्चे भी अब आर-पार के मूड में हैं. बच्चों के मुंह का निवाला छीनने वाले नौ ग्रामप्रधानों पर प्रशासन का शिकंजा कसता जा रहा है. इनमें से एक ग्राम पंचायत पर एफआईआर दर्ज कराकर प्रशासन ने जता दिया कि शासन की योजना से खिलवाड़ करना अब आसान नहीं होगा. आठ ग्राम पंचायतों पर कार्यवाही होनी शेष है. उल्लेखनीय है कि परिषदीय विद्यालयों के बच्चों को कुपोषण से बचाने और विद्यालय में उनका अधिक से अधिक ठहराव सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा मध्यान्ह भोजन योजना लागू की गई थी. बच्चों के हिस्से का भोजन हजम करने वाले इन ग्रामप्रधानों की करतूतों की जानकारी जब ज़िलाधिकारी रणवीर प्रसाद को हुई तो उन्होंने इस मामले को गंभीरता से लिया और उन ग्राम पंचायतों की सूची मांगी, जहां मध्यान्ह भोजन योजना में भारी गड़बड़ी हुई. शिक्षा विभाग द्वारा ऐसी नौ ग्राम पंचायतों की सूची ज़िलाधिकारी को उपलब्ध कराई गई, जिन पर मध्यान्ह भोजन योजना के लाखों रुपये बकाया थे. ज़िलाधिकारी ने मामले को ज़िला पंचायती राज अधिकारी को सौंपते हुए जांच के बाद दोषी ग्रामप्रधानों के ख़िलाफ़ कठोर कार्यवाही के निर्देश दिए.

feedback@chauthiduniya.com

एक ग़ैर सरकारी आंकड़े के मुताबिक, कम्युनिटी रेडियो के ज्यादातर लाइसेंस प्राइवेट सेक्टर के गिने-चुने मीडिया ग्रुपों को ही दिए गए हैं.

सामुदायिक रेडियो आख़िर किसके लिए

बड़े ही सार्थक उद्देश्य के साथ शुरू की गई सामुदायिक रेडियो की परिकल्पना व्यवसायिकता के चलते अस्तित्व के संकट से जूझ रही है. एक तरफ़ दूरदराज के इलाक़ों में राघव जैसे अनपढ़ ग्रामीण अपने दम पर कम्युनिटी रेडियो चला रहें हैं तो दूसरी ओर सरकार और कॉरपोरेट कंपनियां लाइसेंस की हेराफेरी करके इसके ज़रिए अपने व्यवसायिक हित साधने में लगी हुई हैं.

राजेश एस. कुमार

हाल ही में केंद्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री अंबिका सोनी ने 2012 तक देश भर में चार हज़ार से अधिक सामुदायिक रेडियो स्टेशन खोलने की घोषणा की. हमेशा की तरह जनहित में एक और योजना घोषित हो गई, पर शायद अंबिका जी को पता नहीं है कि इस देश में योजनाओं की घोषणा करना जितना आसान है, उन्हें कार्यान्वित कर पाना उससे कहीं ज़्यादा मुश्किल है. मंत्री जब भी किसी क्षेत्र के दौरे पर होते हैं या मीडिया से मुखातिब होते हैं, घोषणाओं की एक लंबी फ़ेहरिस्त जारी कर देते हैं. इसके बाद मीडिया और सरकार का काम पूरा हो जाता है और इन योजनाओं का क्रियान्वयन भगवान भरोसे छोड़ दिया जाता है. फिर भले ही इन योजनाओं को व्यवसायिक संस्थान अपने तरीके से तोड़- मरोड़ कर निजी स्वार्थों के लिए प्रयोग करें. सामुदायिक रेडियो यानी कम्युनिटी रेडियो की भी यही कहानी है. विकास से वंचित और पिछड़े समुदायों को बढ़ावा देने के लिए शुरू किए गए सामुदायिक रेडियो स्टेशन भी व्यवसायिक कंपनियों की कमाई का ज़रिया बनते जा रहे हैं.

एक ग़ैर सरकारी आंकड़े के मुताबिक, कम्युनिटी रेडियो के ज्यादातर लाइसेंस प्राइवेट सेक्टर के गिने-चुने मीडिया ग्रुपों को ही दिए गए हैं. पिछले साल तक सरकार ने एफएम चैनल चलाने के लिए अलग-अलग राज्यों के लगभग 100 शहरों में विभिन्न कंपनियों को लगभग 350 लाइसेंस बांटे. इस बंदरबांट में लाइसेंस बड़े संस्थानों की ही झोली में गए और छोटे समूह अपनी जगह भी नहीं बना पाए यानी उन्हें कोई भागीदारी नहीं मिली. रेडियो के इस कारोबार को विदेशी कंपनियां अपने कब्जे में लेने के लिए उतावली हैं. लाभ कमाने के लिए बड़े पैमाने पर पूंजी निवेश के लिए मीडिया संस्थान आगे आ रहे हैं और इसके लिए सामुदायिक रेडियो के नाम पर एफएम को प्रोत्साहित किया जा रहा है.

सब जानते हैं कि रेडियो में विज्ञापन कमाई का एक बहुत बड़ा जरिया है. जबकि भारत सरकार ने 2002 में आईआईटी/आईआईएम सहित सुस्थापित शैक्षणिक संस्थानों में सामुदायिक रेडियो को स्थापित करने के लिए लाइसेंस प्रदान करने हेतु एक नीति अनुमोदित की थी. बाद में पुनर्विचार करते हुए सरकार ने अब विकास और सामाजिक परिवर्तन से संबधित मुद्दों पर और अधिक भागीदारी की अनुमति देने के उद्देश्य से सिविल सोसाइटी एवं स्वैच्छिक संगठनों को अपने सीमा क्षेत्र के अंतर्गत लाकर इस नीति को विस्तार दिया. इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सामुदायिक रेडियो को चलाने के इच्छुक संगठन ग़ैर लाभकारी संगठन के रूप में गठित होने चाहिए. इसके अलावा सामुदायिक रेडियो चलाने के लिए सरकार मुफ्त में लाइसेंस देती है. बशर्ते इसमें करियर, व्यवसाय, महिला सशक्तिकरण, स्वास्थ्य, स्थानीय संगीत, खेल और स्थानीय मुद्दों पर आधारित कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाए, लेकिन होता कुछ और है.

वर्ष 1991 के आसपास जैसे ही उदारीकरण के नाम पर बाजार खुला, देश में कई माध्यमों की अवधारणाओं का अंकुर फूट पड़ा. यह वह दौर था, जब प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और सूचना का अधिकार जैसे माध्यम गांव तक बेअसर हो रहे थे. इन माध्यमों को प्रभावी बनाने के साथ-साथ बाज़ार में खड़ा करने की पुरजोर कोशिशों के बीच ही कम्युनिटी रेडियो की अवधारणा पनपी. अगर वैश्विक स्तर पर बात करें तो सामुदायिक रेडियो का बीज 1940 के दशक में लैटिन अमेरिका में पड़ा था और दक्षिण एशिया में नेपाल पहला देश है, जहां 1997 में सामुदायिक रेडियो की शुरुआत हुई. भारत में पहली बार सामुदायिक रेडियो की शुरुआत आकाशवाणी के सहभागी के तौर पर भुज (गुजरात) में हुई. लगभग 10 से 12 किमी तक की रेंज कवर करने वाले इस सामुदायिक रेडियो की जब नींव डाली गई थी, तब इसका मकसद ग्रामीण जनता की आवश्यकता, प्राथमिकता, समस्या, सुझाव और समाधान से जुड़ा था. शुरुआत में तो सब ठीक चला, लेकिन जैसे-जैसे निजी क्षेत्रों और बहुराष्ट्रीय संस्थानों का उदय हुआ, बड़े-बड़े व्यापारियों की मुनाफाखोर नज़रें रेडियो बाजार पर टिक गईं और सामुदायिक समस्याओं के निवारण के लिए बना यह साधन आज मनोरंजन का साधन मात्र बनकर रह गया है. इससे भी ज़्यादा चिंता का विषय यह है कि आज इसके नाम पर कई गतिविधियां बगैर सामुदायिक सहयोग से चल रही हैं. कम्युनिटी रेडियो में बतौर आरजे (रेडियो जॉकी) काम कर रहे सुशांत सिंह बताते हैं कि आज कम्युनिटी रेडियो में काम करने वाले कर्मचारी प्रशासनिक पहुंच के दम पर काम कर रहे हैं या फिर वे लाइसेंस धारक कंपनियों के फिरंगी रिश्तेदार हैं.

कुल मिलाकर जिस तबके के लोगों के सामाजिक, कलात्मक, रचनात्मक और आर्थिक विकास के लिए यह रेडियो शुरू किया गया था, वहां अब इसका नामोनिशान तक नहीं दिखता. हालांकि बिहार और हरियाणा के गांवों में चलने वाले कुछ सामुदायिक रेडियो आज भी अपने लक्ष्य की तरफ़ बढ़ रहे हैं, पर इतना नाकाफी है. सरकारी जुबान में बोलें तो सामुदायिक रेडियो का स्वरूप लोकतांत्रिक है, जिसमें हर व्यक्ति को बोलने, सुनने और जनहित के कार्यक्रम बनाने की पूरी आज़ादी है. इस माध्यम के ज़रिए ग्रामीणों और मूलभूत सुविधाओं से वंचित तबकों के विकास और सशक्तिकरण की राह खुलती है. इससे जुड़कर हम विकास से वंचित, उपेक्षित और सताए हुए लोगों की मुक्ति का माध्यम बनकर समुदाय में गुणात्मक परिवर्तन ला सकते हैं, लेकिन ऐसा कितने सामुदायिक रेडियो स्टेशनों में हो रहा है, यह शोध का विषय है.

rajesh@chauthiduniya.com

राघव रेडियो का ज़िंदा रहना ज़रूरी

एक तरफ़ सरकार सामुदायिक रेडियो स्टेशन के लाइसेंस के लिए इच्छुक संस्था को कई विभागों के चक्कर कटवाती है, वहीं बिहार के वैशाली जिले के मंसूरपुर में रहने वाले राघव महतो की कहानी चौंकाने वाली है. राघव ने बिना किसी सरकारी मदद के अपने दम पर कम्युनिटी रेडियो का संचालन किया है. राघव ने एक साल के दौरान इकट्ठे किए हुए यंत्रों और उपकरणों के साथ रेडियो स्टेशन शुरू किया था. यह स्टेशन मुजफ्फरपुर, वैशाली और सारण ज़िलों में एक सामुदायिक रेडियो सेवा संचालित करता था. इस पर स्थानीय बोली में स्थानीय ख़बरें, गीत, एड्स जागरूकता, पोलियो उन्मूलन, गुमशुदगी की खबरें, साक्षरता पहल से संबंधित कार्यक्रम और इलाक़े में हो रहे अपराधों की सूचना आदि का नि:शुल्क प्रसारण किया जाता था. राघव रेडियो की बढ़ती लोकप्रियता देख 2006 में केंद्रीय संचार मंत्रालय ने राघव से चैनल की वैधानिकता पर रिपोर्ट मांगी. लाइसेंस न होने पर ज़िला अधिकारियों ने भारतीय टेलीग्राफ क़ानून के उल्लंघन के आरोप में राघव रेडियो बंद कर दिया. इतना ही नहीं, राघव को दोषी मानकर कुछ समय के लिए गिरफ़्तार भी किया गया, लेकिन मंसूरपुर गांव के लिए वह हीरो था. कई संस्थानों की मदद से अब इस अशिक्षित युवक की प्रेरणादायी कहानी एनसीईआरटी की किताबों में शामिल की गई है. वर्तमान में राघव राजस्थान के अजमेर ज़िले में एक सामुदायिक रेडियो स्टेशन बेयरफुट कम्युनिटी रेडियो स्टेशन में परियोजना प्रमुख के तौर पर काम कर रहे हैं. अगर प्रशासन और सरकार राघव जैसी प्रतिभाओं का हौसला बढ़ाए तो कम्युनिटी रेडियो की परिकल्पना साकार होने से कोई नहीं रोक सकता, पर सरकार के रवैए से ऐसा लगता नहीं है.

मेरी दुनिया.... जम्मू कश्मीर का दूषित वातावरण! ...धीर

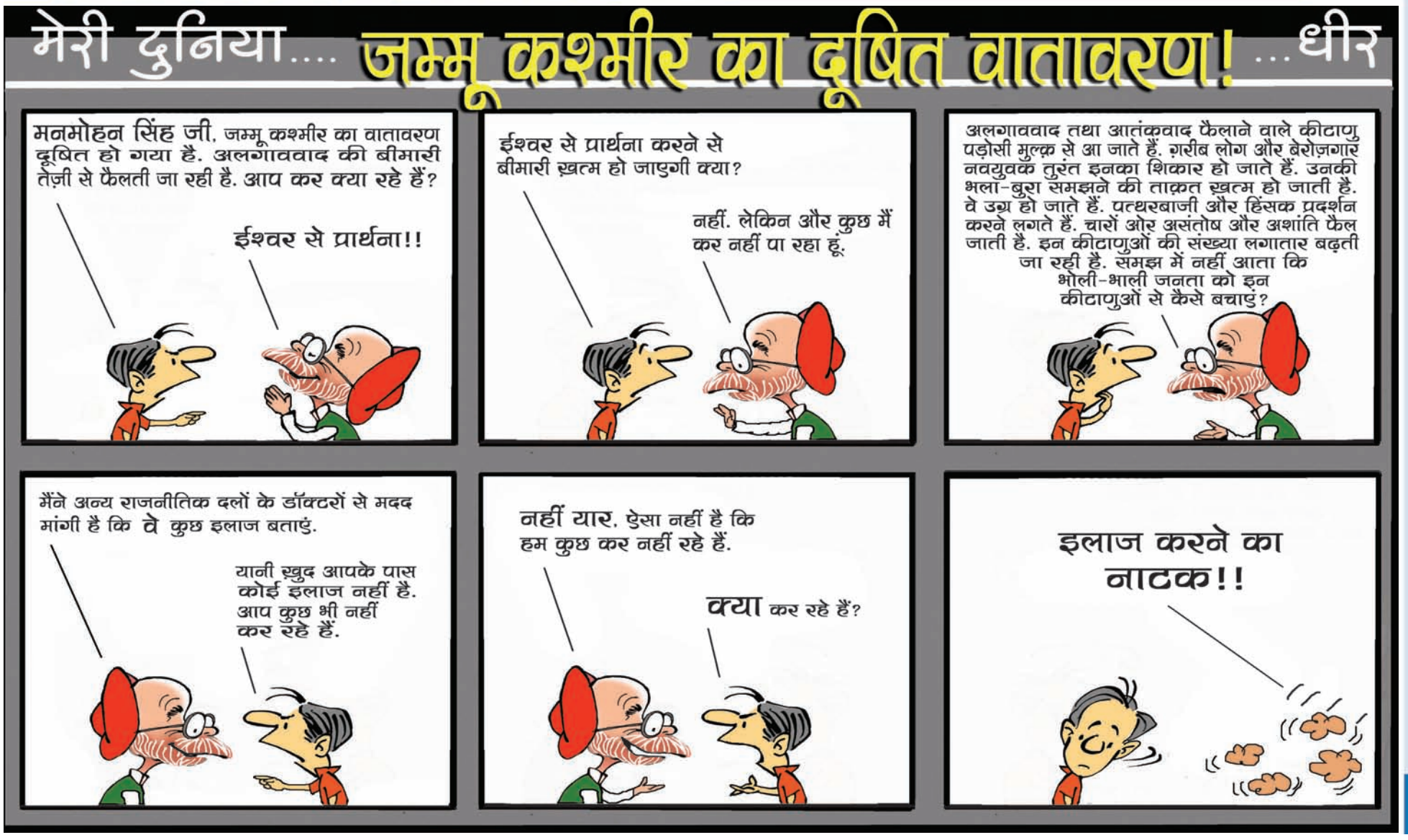

शेखावाटी की नवलगढ़ तहसील के कटरथला गांव निवासी कालू भाट अपने नौ भाई-बहनों में सबसे बड़ा है. बचपन से ही विकलांग कालू पढ़ाई भी नहीं कर सका.

उम्मीद की रोशनी

- कंपनियां 6 हज़ार रुपये में बेचती हैं सोलर पैनल.
- सरकार इस पर देती है 4 हज़ार रुपये की सब्सिडी.
- उपभोक्ता को मिलता है ढाई हज़ार रुपये में.
- देशी तकनीक से यह 17 सौ रुपये में बन सकता है.

आख़िर कालू और राधेश्याम जैसे हज़ारों विकलांग युवाओं के लिए बनाई गई सरकारी योजनाएं ज़रूरतमंदों तक क्यों नहीं पहुंच पातीं? सौर ऊर्जा लैंप वितरण की सरकारी योजना आख़िर किसके लिए है और किसके पास पहुंच रही है?

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

शशि शेखर

एक तो ग़रीब, ऊपर से विकलांग. ज़मीन के नाम पर सिर्फ़ उतना, जिस पर झोपड़ीनुमा घर बना हुआ है. बेरोज़गारी और मुफ़लिसी इनकी नियति बन चुकी थी. कल तक कालू भाट और राधेश्याम की ज़िंदगी की कहानी कुछ ऐसी ही थी, लेकिन यह कल की कहानी है. आज कालू भाट और राधेश्याम की ज़िंदगी में रोशनी है, आंखों में चमक है, उम्मीद की किरण है, एक सपना है बेहतर भविष्य का. और उनका यह सपना पूरा किया है एम आर मोरारका फाउंडेशन ने. फाउंडेशन की तरफ़ से इन दोनों विकलांग युवकों को सौर ऊर्जा से चलने वाली 25 लालटेनें और एक सौर ऊर्जा पैनल मुहैया कराया गया है. आज घर बैठे कालू और राधेश्याम दो-तीन हज़ार रुपये महीने कमा रहे हैं.

शेखावाटी की नवलगढ़ तहसील के कटरथला गांव निवासी कालू भाट अपने नौ भाई-बहनों में सबसे बड़ा है. बचपन से ही विकलांग कालू पढ़ाई भी नहीं कर सका. अपनी ज़मीन न होने की वजह से कालू के पिता मज़दूरी करके किसी तरह परिवार चला रहे थे. नौ बच्चों वाले इस परिवार का भरण-पोषण कैसे होता होगा, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है. अशिक्षित और विकलांग कालू चाहकर भी अपने परिवार की कोई मदद नहीं कर पा रहा था. इसी बीच एम आर मोरारका फाउंडेशन ने एक नई पहल की. फाउंडेशन ने सौर ऊर्जा के इस्तेमाल और उसे रोज़गार का माध्यम बनाने की एक योजना बनाई. योजना के तहत क्षेत्र के ऐसे विकलांग युवकों का चयन किया गया, जो ग़रीब थे. बेरोज़गार थे. कालू भाट का चयन भी इसी योजना के तहत कर लिया गया. फाउंडेशन की ओर से कालू को एक सौर ऊर्जा पैनल दिया गया और 25 सौर ऊर्जा चालित लालटेनें भी. कालू को सौर ऊर्जा लालटेन के बारे में प्रशिक्षण भी दिया गया. कालू और उसके परिवारजनों के जीवन में ग़रीबी का जो अंधेरा बरसों से छाया हुआ था, आज धीरे-धीरे छंटने लगा है.

कालू को रोज़गार तो मिला ही, कटरथला और आसपास के गांवों के लोगों को भी अंधेरे से लड़ने का एक नया हथियार मिल गया. इलाक़े के ज़्यादातर गांवों में बिजली आपूर्ति नियमित नहीं है, इसलिए छात्र से लेकर किसान तक कालू भाट से सौर ऊर्जा चालित लालटेन किराए पर ले जाते हैं. दुकानदारों में और शादी-समारोह के अवसर पर कालू की सौर लालटेनों की मांग दिनोंदिन बढ़ती जा रही है. बदले में कालू को प्रति लालटेन एक रात के 10 रुपये मिल जाते हैं. हां, छात्रों के लिए विशेष रियायत भी है. पढ़ाई करने वाले छात्रों के लिए प्रति लालटेन एक रात का किराया सिर्फ़ 5 रुपये है. कालू भाट अपने इस नए रोज़गार से काफी ख़ुश है. कालू कहता है कि इससे वह हर महीने लगभग दो हज़ार रुपये कमा लेता है. अभी तो धंधा नया है, जैसे-जैसे लोगों को इसके बारे में पता चलेगा, कमाई और बढ़ जाएगी. कालू अब सौर ऊर्जा के उपयोग से संबंधित और अधिक जानकारी जुटाकर क्षेत्र के लोगों को जागरूक बनाने का काम कर रहा है. फाउंडेशन को धन्यवाद देते हुए कालू की मां बनारसी कहती है कि इन लोगों ने हमारी बहुत मदद की, अब हम बहुत ख़ुश हैं.

कटरथला के इस प्रयोग को मिली सफलता की ख़बर जल्द ही आसपास के गांवों में फैल गई. फाउंडेशन ने भी इस योजना को अन्य गांवों में फैलाने का फ़ैसला लिया. कालू भाट की तरह कोलसिया गांव का राधेश्याम भी ग़रीबी और बेरोज़गारी से जूझ रहा था. दसवीं पास राधेश्याम बचपन में ही पोलियो की चपेट में आकर अपने दोनों पैर गंवा चुका था. पिता की पहले ही मौत हो चुकी थी. पांच बहनों और मां की ज़िम्मेदारी भी विकलांग राधेश्याम पर ही थी. फाउंडेशन की सौर लैंप योजना के तहत राधेश्याम को भी 25 सौर लालटेनें और एक सौर ऊर्जा पैनल उपलब्ध कराया गया. विकलांग राधेश्याम की पढ़ाई-लिखाई के लिए फाउंडेशन ने ट्राई साइकिल भी दी, ताकि उसे बैसाखी का सहारा न लेना पड़े. आज राधेश्याम न सिर्फ़ अपनी आगे की पढ़ाई कर रहा है, बल्कि अब वह घर बैठे हर महीने दो-ढाई हज़ार रुपये भी कमा रहा है. फाउंडेशन की तरफ़ से कालू और राधेश्याम के इस नए रोज़गार का आसपास के गांवों में प्रचार भी किया जा रहा है, पर्चे आदि छपवा कर बांटे जा रहे हैं, ताकि इनके व्यवसाय का प्रचार हो सके. कालू और राधेश्याम की सफलता देख कर आस-पास के गांव के लोग भी प्रेरित हो रहे है. अब तो इस बात पर भी चर्चा होने लगी है कि क्यों नहीं नवलगढ़ तहसील के सभी गांवों को सौर उर्जा क्षेत्र बना दिया जाए.

कालू भाट और राधेश्याम जैसे विकलांग युवकों के उत्साह को देखकर यह कहना ग़लत नहीं होगा कि कभी-कभी घुटनों के बल चलने वाले भी जंग जीत जाते हैं, खासकर ज़िंदगी की जंग. दोनों युवक ख़ुद में एक उदाहरण हैं, उन लोगों के लिए, जो अपनी शारीरिक अक्षमता को ख़ुद के लिए अभिशाप समझते हैं. लेकिन इस पूरी कहानी का एक आश्चर्यजनक पहलू भी है. केंद्र सरकार, सौर उर्जा को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएं चला रही है. लेकिन इन सरकारी योजनाओं में कुछ ऐसी कमियां है जिसकी वजह से अभी भी देश के ज़्यादातर गांव शाम होते ही अंधेरे में डूब जाते हैं. जैसे, सौर ऊर्जा चालित लैंप का लाभ उसी गांव को मिल सकता है जहां बिजली नहीं पहुंची है. इसके अलावा, सरकारी सब्सिडी दिए जाने के बाद भी सौर पैनल और लालटेन की क़ीमत क़रीब तीन हज़ार रुपये है. बहरहाल, मोरारका फाउंडेशन ने जिस तरह से सौर ऊर्जा को रोज़गार के माध्यम में बदलने का काम किया है, वह अनुकरणीय है. क्या सरकार इस योजना को अपनाने और आम लोगों खास कर कालू और राधेश्याम जैसे विकलांग युवकों के लिए लागू करने पर विचार करेगी? अगर सरकार इस फ़ार्मूले को अपनाती है तो यह एक तीर से कई समस्याओं से निपटने जैसा काम होगा. एक तरफ़ जहां गांवों में रोशनी आएगी वहीं दूसरी ओर कालू और राधेश्याम जैसे विकलांग युवकों को रोज़गार का अवसर भी मिल सकता है. और अगर सरकार इस योजना को नहीं अपनाती है तो उसे कुछ सवालों के जवाब देने चाहिए. मसलन, विकलांग युवाओं के लिए बनाई गईं सरकारी योजनाएं ज़रूरतमंदों तक क्यों नहीं पहुंच पातीं? आख़िर क्यों जो काम सरकार का है, उसे एक फाउंडेशन कर रहा है? फिर सौर ऊर्जा लैंप वितरण की सरकारी योजना आख़िर किसके लिए है और किसके पास पहुंच रही है?

shashishekhar@chauthiduniya.com

सोलर लैंप की सरकारी योजना

केंद्र सरकार की एक योजना के तहत गांवों में सोलर लैंप का वितरण किया जाता है. इसके लिए सरकार सोलर पैनल और लैंप पर सब्सिडी भी देती है. लेकिन यह योजना सिर्फ़ उन्हीं जगहों के लिए है, जहां बिजली की आपूर्ति नहीं होती. अब लाख टके का सवाल यह है कि कितने गांवों तक सरकार ने बिजली पहुंचा दी है और अगर पहुंचाई भी है तो बिजली की आपूर्ति कितने समय के लिए की जाती है. इसके अलावा जानकारों का यह भी मानना है कि इस योजना के लिए सरकार

अपने परिवार के साथ कालू भाट (सफ़ेद शर्ट में)

मुकेश गुप्ता

निजी कंपनियों से जो सोलर पैनल ख़रीदती है, वे काफी महंगे हैं. मोरारका फाउंडेशन के कार्यकारी निदेशक मुकेश गुप्ता बताते हैं कि उक्त निजी कंपनियां सरकार को एक सोलर पैनल 6 हज़ार रुपये में बेचती हैं. सरकार इस पर चार हज़ार की सब्सिडी देती है. अंत में यह उपभोक्ता को लगभग ढाई हज़ार रुपये में मिलती है. मुकेश गुप्ता कहते हैं कि यदि हम अपनी तकनीक से इस सोलर पैनल को बनाएं तो इसका ख़र्च महज़ 16 से 17 सौ रुपये आएगा. ग़ौरतलब है कि मुकेश गुप्ता ख़ुद एक कृषि वैज्ञानिक हैं और ग्रामीण विकास से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर रिसर्च भी कर रहे हैं. ज़ाहिर है, उनका यह दावा कमज़ोर नहीं माना जा सकता. यह पूछे जाने पर कि क्या उन्होंने अपनी तकनीक के बारे में केंद्र सरकार या संबंधित मंत्रालय को जानकारी दी है और उस पर सरकार की क्या प्रतिक्रिया रही? वह बताते हैं कि सरकार यह तो कहती है कि आपकी योजना या तकनीक अच्छी है, लेकिन इसके बाद फिर कुछ नहीं होता.

राधेश्याम

इन योजनाओं के बारे में अधिक जानकारी और सहायता के लिए संपर्क करें

वी.बी. बापना
महा प्रबंधक

मोरारका फाउंडेशन, वाटिका रोड, जयपुर-302015
मोबाइल-09414063458
ईमेल-vbmorarka@yahoo.com.

मुसलमानों को अलग नज़रिए से देखना भारतीय समाज के लिए नया नहीं है. भारतीय लोगों के बीच यह भावना स्वतंत्रता के बाद से ही लगातार बलवती होती रही है.

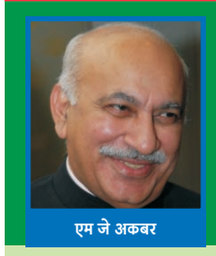

एम जे अकबर

प्रधानमंत्री जी, अहम से बचिए

क्या यह सच है? उनके प्रशंसक पहले भी ऐसा कहते रहे हैं, लेकिन कहीं ऐसा तो नहीं कि ख़ुद मनमोहन सिंह भी स्वयं को भारत का सबसे अच्छा प्रधानमंत्री मानने लगे हैं? ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि प्रधानमंत्री आत्मप्रशंसा में विश्वास नहीं करते. लेकिन यदि यह सच है तो फिर उन्होंने ऐसा क्यों कहा कि उनका मंत्रिमंडल नेहरू और इंदिरा के मंत्रिमंडलों से बेहतर है. मंत्रियों के बीच तालमेल की चर्चा करते हुए उन्होंने याद दिलाया कि नेहरू और पटेल अपने विरोध को पत्रों के माध्यम से हवा देते थे, जबकि इंदिरा गांधी को अपने प्रधानमंत्रित्व काल में तथाकथित युवा तुर्कों की टोली से निपटना पड़ता था. मनमोहन सिंह का यह बयान इतिहास के तराजू पर खरा नहीं उतरता. नेहरू और पटेल एक-दूसरे को पत्र तब लिखते थे, जब किसी नीतिगत मुद्दे पर उन्हें अपना पक्ष रखने की ज़रूरत महसूस होती थी. सच्चाई यह है कि उनका यह पत्राचार एक उभरते हुए राष्ट्र में प्रशासन और सरकारी कामकाज की आधारशिला तैयार कर रहा था. मौजूदा दौर में राजनीति के मठाधीश स्वार्थसिद्धि के लिए जिस तरह एक-दूसरे की टांग खिंचाई करने में लगे रहते हैं, नेहरू और पटेल का तरीक़ा उससे कहीं अच्छा था. अपने विचार और कामों से भारतीय राष्ट्र के अभ्युदय में अहम भूमिका निभाने वाले इन दोनों राजनेताओं की मौजूदा दौर के नेताओं से तुलना करना भी बेमानी है. नेहरू द्वारा साल 1947 में पटेल को लिखे एक पत्र का ही उदाहरण लें. नेहरू ने पटेल को आगाह करते हुए इसमें लिखा था कि पाकिस्तान बलपूर्वक कश्मीर पर क़ब्ज़ा करने की कोशिश कर सकता है और ऐसी हालत में शेख अब्दुल्ला, जो उस समय महाराज हरि सिंह की जेल में कैद थे, भारत के लिए सबसे महत्वपूर्ण साबित हो सकते हैं. इस पत्र में दोनों नेताओं के बीच राजनीतिक कटुता की कोई झलक नहीं मिलती, बल्कि उनकी दूरदर्शिता झलकती है. नेहरू के इस पत्र में कितनी सच्चाई थी, इसे बताने की अब शायद कोई ज़रूरत नहीं है. स्वतंत्रता संग्राम में अग्रणी भूमिका निभाने वाली यह पीढ़ी पढ़ी-लिखी थी और पत्रों की अहमियत को समझती थी. नेहरू राज्यों के मुख्यमंत्रियों को भी लगातार चिट्ठियां लिखते थे, लेकिन इसका यह मतलब कतई नहीं कि वह उनका विरोध करते थे. नेहरू चिट्ठियों का इस्तेमाल शासन के एक हथियार के रूप में करते थे. फिर पटेल की 15 दिसंबर, 1950 को ही मृत्यु हो गई और 1964 में अपनी मौत से पहले तक नेहरू ने कई बार अपने मंत्रिमंडल का गठन किया, जिसमें पटेल शरीक नहीं थे.

इंदिरा गांधी को अपने शासनकाल के दौरान युवा तुर्कों के एक तथाकथित समूह से दो-चार ज़रूर होना पड़ा था, लेकिन युवा तुर्कों की इस टोली के सबसे बड़े ख़लीफ़ा माने जाने वाले चंद्रशेखर इंदिरा की कैबिनेट का कभी हिस्सा नहीं रहे. राजनीति में मतैक्य के लिए दो चीजों का होना बेहद आवश्यक है, नीतिगत मुद्दों पर सहमति और नेता का व्यक्तित्व.

इंदिरा गांधी को अपने शासनकाल के दौरान युवा तुर्कों के एक तथाकथित समूह से दो-चार ज़रूर होना पड़ा था, लेकिन युवा तुर्कों की इस टोली के सबसे बड़े खलीफा माने जाने वाले चंद्रशेखर इंदिरा की कैबिनेट का कभी हिस्सा नहीं रहे. राजनीति में मतैक्य के लिए दो चीजों का होना बेहद आवश्यक है, नीतिगत मुद्दों पर सहमति और नेता का व्यक्तित्व. आधुनिक राजनीति में नीतियां, चाहे वे ग़लत हों या सही, अक्सर वोट बैंक या भ्रष्टाचार को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं. नेहरू और इंदिरा करिश्माई नेता थे. मनमोहन सिंह में चाहे लाख गुण हों, लेकिन उन्हें करिश्माई नहीं कहा जा सकता. एक नेता के रूप में देखें तो वह इतने कमज़ोर थे कि अपनी कैबिनेट का चुनाव करने में भी सक्षम नहीं थे. उनके लिए यह काम सोनिया गांधी ने किया. ग़ौरतलब है कि मनमोहन ने अपनी कैबिनेट की तुलना नरसिम्हाराव के मंत्रिमंडल से नहीं की, जिसमें वह वित्तमंत्री थे. इसके बजाय उन्होंने ख़ुद को कांग्रेस पार्टी के दो सबसे बड़े और महानतम व्यक्तित्वों के मुक़ाबले खड़ा कर दिया. हमारी राष्ट्रीय राजनीति में नेहरू विरोध का अपना एक अलग इतिहास रहा है. जैसा कि शेक्सपीयर ने कहा था, लोगों की अच्छाइयां उनकी मौत के साथ ही दफन हो जाती हैं, लेकिन बुराइयां

राष्ट्रीय अवचेतन में लगातार बनी रहती हैं, हम उन्हें भुला नहीं पाते. नेहरू को अब दो ही चीजों के लिए याद किया जाता है, कश्मीर के मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र के पास भेजने और 1962 में चीन के हाथों मिली करारी हार के लिए. कांग्रेस पार्टी का कोई भी नेता नेहरू का विरोधी नहीं है, लेकिन पार्टी का एक मज़बूत धड़ा यह मानता रहा है कि नेहरू दो क्षेत्रों में बुरी तरह असफल रहे, अर्थव्यवस्था और विदेश नीति. इस धड़े का यह भी मानना है कि वामपंथ के प्रति नेहरू के झुकाव की भारत को बड़ी क़ीमत चुकानी पड़ी और उनके उत्तराधिकारियों ने भी इसमें सुधार के लिए कोई कोशिश नहीं की.

नरसिम्हाराव को ऐसा पहला प्रधानमंत्री माना जा सकता है, जिनका नेहरू की नीतियों के प्रति खास अनुराग नहीं था. पिछले दो दशकों में राव और मनमोहन ने समय-समय पर दक्षिणपंथी पार्टियों के समर्थन से नेहरू-इंदिरा की नीतियों को काफी बदल दिया है. हालांकि राष्ट्रीय राजनीति में उनके योगदान की चर्चा करना वह नहीं भूलते, लेकिन उन्हें यह भी लगता है कि आर्थिक सुधारों की शुरुआत और अमेरिका के साथ रणनीतिक साझेदारी को बढ़ावा देकर उन्होंने देश की बेहतर सेवा की है. इसमें भी कोई संदेह नहीं कि नई अर्थव्यवस्था के पक्षधर लोग राव और मनमोहन की प्रशंसा में कसीदे पढ़ते हैं, लेकिन यह भी सच है कि राव ने अपनी नीतियों से सामाजिक समरसता की उस भावना को तार-तार कर दिया, जिसे विभाजन के बाद नेहरू ने बड़ी लगन से विकसित किया था. मनमोहन राव की तरह क्रांतिकारी सामाजिक परिवर्तनों के पक्षधर नहीं हैं, लेकिन उन्हें शायद यह लगता है कि इतिहास राव को नेहरू से ज़्यादा अहमियत देगा. अवचेतन मन अक्सर खामोशी की आवाज़ होता है. मनमोहन सिंह ज़्यादा बोलते नहीं. विचार, मुद्दे, गर्व और शर्म की भावनाएं दिमाग़ के एक कोने में कैद होती हैं. ये चीजें इतनी आसानी से बाहर नहीं निकलतीं, क्योंकि इससे भावनाएं भड़क सकती हैं और आगे का रास्ता मुश्किलों भरा हो सकता है. लेकिन दिल में छुपी ये भावनाएं गाहे-बगाहे सामने आ ही जाती हैं. नेहरू, पटेल और इंदिरा की चर्चा करना किसी लिहाज़ से प्रशंसा के काबिल नहीं. आज तक किसी भी प्रधानमंत्री ने नींद में भी अपने मंत्रिमंडल को नेहरू के मंत्रिमंडल से बेहतर नहीं बताया, लेकिन इसमें विडंबना जैसी कोई बात नहीं, क्योंकि कांग्रेस पार्टी का स्वरूप और चरित्र ही पूरी तरह बदल चुका है. वह अपने परंपरागत समाजवादी चोले को काफी पहले ही उतार चुकी है और चमक-दमक भरी नई पार्टी में तब्दील हो चुकी है. मनमोहन सिंह शायद अपनी पार्टी को ज़्यादा अच्छी तरह से जानते हैं, उससे कहीं ज़्यादा, जितना कि पार्टी उन्हें जानती है.

feedback@chauthiduniya.com

भारतीय मुसलमान और आवास की समस्या

भारत में मुसलमान समुदाय के सामने समस्याओं की कोई कमी नहीं. मुसलमानों को अलग नज़रिए से देखना या उनकी धार्मिकता को राष्ट्रीय एवं सामाजिक पहचान से अलग करके देखना तो आम बात है. सबसे बड़ी मुश्किल तो यह है कि मुसलमानों को अपनी पसंदीदा जगहों पर रहने के लिए मकान तक नहीं मिलता. सच्चर कमेटी ने भी स्वीकार किया है कि मुसलमानों के लिए अपनी पसंदीदा जगहों पर किराए पर घर लेना या ख़रीदना भी चिंता का विषय रहा है. एक ओर तो मकान मालिक अपनी संपत्तियों को मुसलमानों के हाथों किराए पर देने या बेचने को तैयार नहीं होते तो ऐसी रिपोर्ट्स भी हैं, जिनसे मालूम पड़ता है कि हाउसिंग सोसाइटीज के अधिकारी भी मुसलमानों को अपनी सोसाइटी में शामिल न होने की नसीहत देते हैं. यह कमेटी के सम्मानित सदस्यों के लिए नई ख़बर हो सकती है, लेकिन यह उन मुसलमानों के लिए नई बात नहीं है, जो दिल्ली और मुंबई जैसे बड़े महानगरों में रह रहे हैं. यह उनकी दिनचर्या का एक हिस्सा बन चुका है और वे इसे रोज भोगते हैं.

यदि कोई मुसलमान किसी बड़े शहर में रिहायशी मकान के लिए किसी एजेंट के पास जाता है तो वह एजेंट घर के मालिक से कुछ इस अंदाज़ में बात करता है, मुझे उम्मीद है कि किराएदार के प्याज, लहसुन, मांस, मछली आदि खाने से आपको कोई आपत्ति नहीं होगी. यदि घर का मालिक इस पर अपनी आपत्ति जताता है तो संभावित किराएदार को बता दिया जाता है कि यह घर केवल शाकाहारी लोगों के लिए है. यदि मकान मालिक इस पर अपना विरोध नहीं जताता तो बात कॉन्ट्रैक्ट पर हस्ताक्षर करने की आती है. लेकिन जैसे ही उसे यह पता चलता है कि उसके संभावित किराएदार का नाम कोई ख़ान, सिद्दीकी, फारुकी या अहमद है तो वह तमाम तरह के बहाने बनाने लगता है. अमूमन वह हंसते हुए कहता है, ख़ान साहब, हम इस मसले को कल तक रहने देते हैं और फिर आगे बात करते हैं. यदि ख़ान साहब को बात समझ में आ जाती है तो वह ख़ुद ही अगले दिन नहीं आते. यदि वह मकान मालिक के संदेश को समझ नहीं पाते और अगले दिन फिर आते हैं तो मकान मालिक कुछ इस अंदाज़ में बात करता है, अरे ख़ान साहब,

आपका स्वागत है, लेकिन आपने आने में थोड़ी देर कर दी. मैंने एक घंटे पहले ही मकान किसी दूसरे को दे दिया है. मैं आपकी ही प्रतीक्षा कर रहा था, लेकिन आपने मुझे देर से आने के बारे में इत्तिला नहीं की. आपने बता दिया होता तो मैं थोड़ी देर और प्रतीक्षा कर सकता था.

सच्चर कमेटी के लिए यह राहत की बात हो सकती है कि मुसलमानों को अलग नज़रिए से देखना भारतीय समाज के लिए नया नहीं है. भारतीय लोगों के बीच यह भावना स्वतंत्रता के बाद से ही लगातार बलवती होती रही है. इसकी वजह शायद देश का विभाजन है, जिसके लिए मुसलमानों को दोषी माना गया. 1960 के दशक के आख़िरी दिनों में उर्दू कहानीकार कृष्ण चंद्र ने इसी विषय पर एक नाटक की रचना की थी, जिसका नाम था, दरवाजे खोल दो. इस नाटक का प्रकाशन भी किया गया था और इसे आकाशवाणी से प्रसारित भी किया गया था. नाटक का कथानक एक मुसलमान वैज्ञानिक पर केंद्रित है, जिसका मुंबई से दिल्ली तबादला हो जाता है. वह दिल्ली में किसी अच्छे इलाक़े में रिहायश के लिए मकान ढूंढने की कोशिश करता है. वह पुरानी दिल्ली के इलाक़ों या ऐसे क्षेत्रों में नहीं रहना चाहता, जिनकी पहचान मुसलमानों के इलाक़े के रूप में हो. वह आधुनिक सुविधाओं से युक्त किसी पॉश इलाक़े में रहने की जगह ढूंढ रहा होता है, लेकिन जहां कहीं भी जाता है, उसे निराशा ही हाथ लगती है. उसके लिए दरवाजे नहीं खुलते. आख़िर में जब उसे मकान मिलता है तो वैज्ञानिक को इसके लिए अपना नाम बदलना पड़ता है. उसे अपनी पहचान छुपाकर हिंदू नाम का सहारा लेना पड़ता है.

हमें यह मानने से गुरेज नहीं करना चाहिए कि हमारे शहर धार्मिक आधार पर बंटे हुए हैं. देश के शहरी इलाक़ों की आबादी का धार्मिक आधार पर ध्रुवीकरण हो रहा है. हर शहर में हिंदुओं और मुसलमानों के लिए अलग-अलग इलाक़े हैं. महानगरों की बात छोड़िए, सहारनपुर और इलाहाबाद जैसे शहरों में भी आबादी का यह विभाजन स्पष्ट नज़र आ जाता है. हिंदू बहुल इलाक़ों में मुसलमानों के लिए रिहायश की जगह ढूंढना नामुमकिन सरीखा है. इसी तरह मुसलमानों के रिहायशी इलाक़ों में किसी हिंदू धर्मावलंबी के लिए मकान तलाश करना टेढ़ी खीर साबित होता है. दोनों धर्मों को मानने वाले लोग अलग-अलग रहते हैं. उनके बीच आपसी संपर्क भी काफी सीमित होते हैं. इसके चलते मुसलमानों की बहुलता वाले इलाक़े समाज से अलग होते जा रहे हैं, लेकिन शहरी आबादी का यह धार्मिक विभाजन हमारे समाज के लिए अच्छा नहीं है. धार्मिक दंगों की हालत में यह ध्रुवीकरण और भी गंभीर रुख़ अख्तियार कर लेता है और पहले से ही बंटी हुई आबादी को एक-दूसरे के ख़िलाफ़ गोलबंद करना कट्टरवादी ताक़तों के लिए आसान होता है.

औसाफ अहमद
feedback@chauthiduniya.com

लेखक मशहूर शिक्षाविद् और इस्लामिक बैंकिंग के विशेषज्ञ हैं

लूट महोत्सव

23-29 अगस्त की कवर स्टोरी-सबसे बड़ा घोटाला पढ़ने को मिली. कॉमनवेल्थ गेम्स के नाम पर हर तरफ लूट मची है. ऐसा लग रहा है कि देश में लूट का महोत्सव मनाया जा रहा है. सवाल यह है कि लूट का महोत्सव दिल्ली में ही मनाया जा रहा है या पूरे देश में? आज़ाद भारत के इस कथित सबसे बड़े खेल समारोह के लिए देश और किस-किस प्रदेश में कहां-कहां स्टेडियम बनाए जा रहे हैं? जो 35 हज़ार करोड़ रुपये इंफ्रास्ट्रक्चर हेतु दिए गए हैं, उसमें दिल्ली के अलावा और कौन-कौन से प्रदेशों में पैसा ख़र्च किया जाएगा? पचास करोड़ रुपये की आतिशबाज़ी का मज़ा सिर्फ़ दिल्ली लूटेगी या अन्य प्रदेश भी? सच तो यह है कि मौक़ापरस्तों को हाथ धोने का मौक़ा देने वाली यह बहती गंगा दिल्ली से निकल कर दिल्ली में ही विलीन हो रही है.

-डॉ. सुशील कुमार गुप्त, *थाना चौक, खगड़िया, बिहार.*

ऐसे ऐसे जज!

13-19 सितंबर की कवर स्टोरी-कैसे कैसे जज पढ़ी. निस्संदेह यह साहसपूर्ण रिपोर्टिंग है. मालूम हुआ कि ज़िम्मेदार पदों पर आसीन हस्तियां किस तरह अपने अधिकारों-पदों का दुरुपयोग कर रही हैं. यूं तो लूट हर तरफ़ चल रही है, लेकिन न्यायपालिका जैसे महत्वपूर्ण स्तंभ से देशवासी अभी भी बहुत उम्मीद रखते हैं. और वहां से जब इस तरह की ख़बर आ रही है तो यह निश्चित तौर पर बेहद चिंतनीय है.

-निशीत कुमार शर्मा, *सुतरखाना, कानपुर, उत्तर प्रदेश.*

आम जनता देश के क़ानून और इंसाफ़ के मंदिर में बैठकर फ़ैसला सुनाने वाले जजों पर आंख मूंद कर विश्वास करती है, लेकिन जब सबका फ़ैसला करने वाले जज ही सरकारी धन और संसाधन लूटने पर आमादा हो जाएंगे तो इस देश का अंजाम क्या होगा?

-प्रणय पाल, *आजमगढ़, उत्तर प्रदेश.*

घोटालेबाज़ जजों को सबक सिखाया जाना चाहिए था, लेकिन दूसरों जजों द्वारा उन्हें बचाने की कोशिश की गई. इस कदम ने पूरी न्यायिक व्यवस्था को शर्मसार कर दिया. सवाल यह है कि जनसामान्य अब आख़िर किस पर भरोसा करे?

-ओमप्रकाश, *शिवपुरी, मध्य प्रदेश.*

बधाई

चौथी दुनिया ने अपने 30 अगस्त-5 सितंबर के अंक में दम तोड़ता लोकतंत्र शीर्षक से जो स्टोरी प्रकाशित की है, उसके लिए पूरे उत्तर प्रदेश के आदिवासियों-गोंडी धर्मियों की ओर से आपको बधाई और धन्यवाद. यह पहला अख़बार है, जिसने बड़ी बेबाकी-जांबाज़ी से गोंड-धुरिया आदिवासियों-जनजातियों के बारे में लिखा. इससे पहले कई बार लिखकर देने के बावजूद किसी अख़बार-पत्रिका ने इस समुदाय की कोई खोज ख़बर नहीं ली.

-उमाशंकर गोंड एडवोकेट, *अखिल भारत गोंड महासभा, सिद्धार्थनगर, उत्तर प्रदेश.*

कहीं हम मज़ाक न बन जाएं

शहर इंसानों के रहने लायक़ हों या न हों, हम चाहे जैसे भी जी रहे हों, यह एक अलग और वृहद विषय है. फ़िलहाल तो डर इस बात का है कि कॉमनवेल्थ गेम्स के दौरान आने वाले विदेशी मेहमान कहीं हमारी व्यवस्था का मज़ाक न उड़ाने लगें.

-दिनेश सिंह, *पटना, बिहार.*

फिर से नौकरी मिले

हिंदुस्तान फर्टिलाइज़र कॉरपोरेशन बंद होने से सैकड़ों लोग बेरोज़गार हो गए. अदालत से हमारे पक्ष में फ़ैसला आ चुका है. हम राज्य और केंद्र सरकार से फिर से नौकरी की मांग करते हैं. हमने उर्वरक मंत्रालय को अपना मांगपत्र भेज दिया है. उम्मीद है कि हमारी बात ज़रूर सुनी जाएगी.

-अशोक सिंह, *बिहट, बेगूसराय, बिहार.*

किसानों के साथ मज़ाक

देश की आत्मा गांवों में बसती है और गांव ही असली हिंदुस्तान हैं, यह सच जानते हुए भी भूमि अधिग्रहण के नाम पर किसानों के साथ अन्याय किया जा रहा है. सरकार की नीतियां स्पष्ट नहीं हैं, कार्यक्रमों को कोई अता-पता नहीं है. वह सिर्फ़ मुनाफाखोरी के लिए किसानों की बेशक़ीमती ज़मीनें औने-पौने दामों पर हथियाना चाहती है. यह भविष्य के लिए अच्छा संकेत नहीं है.

-राघव मिश्र, *ग्वालियर, मध्य प्रदेश.*

आप अपने स्वतंत्र विचार तथा प्रतिक्रियाएं हमें इसी पते पर भेजें, संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर-11 नोएडा, (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

कश्मीर की तकलीफ़ समझिए

कोई क्यों न सरकार पर गुस्सा हो. अगर ईद पर भी एक-दूसरे को बधाई न दे पाएं तो ईद मनाना बेकार हो जाता है. ईद त्योहार ही प्यार, मोहब्बत और भाईचारे का है. सारी दुनिया में इसे हर्ष- उल्लास के साथ मनाया गया, लेकिन कश्मीर में लोग घरों से बाहर नहीं निकल पाए. न उन्होंने कपड़े नए पहने, न सिवइयां खाईं, जिन्होंने खाईं, उन्हें भी मीठी नहीं लगीं, क्योंकि ईद से महीने भर पहले से कर्फ़्यू में घाटी थी. अफ़सोस इस बात का कश्मीरियों को था कि वे एक-दूसरे से गले मिलना तो दूर, बधाई भी नहीं दे सके. इसकी वजह सरकार का कश्मीर में एसएमएस सर्विस को रोक देना रहा. वहां लैंडलाइन और मोबाइल सर्विस चल रही है, लेकिन मैसेज और इंटरनेट बंद हैं. आज आम लोग मोबाइल से फोन करना महंगा मानते हैं, लेकिन संदेश देना सस्ता होता है. सारी दुनिया में, विशेषकर भारत में त्योहारों पर अब मोबाइल एसएमएस ही भेजे जाते हैं. बड़े शहरों में तो एसएमएस ट्रैफिक कभी-कभी जाम भी हो जाता है. कश्मीर में लोग इससे वंचित रहे. उनका दर्द सरकार में समझे कौन.

हक़ीक़त यह है कि मोबाइल कंपनियां इसके पीछे नज़र आती हैं. वे किसी न किसी फ़ैसला लेने वाली ताक़त के साथ मिलकर मोबाइल कॉल की संख्या बढ़ाकर मुनाफ़ा कमा रही हैं. आख़िर लोग मजबूरी में एसएमएस सुविधा न होने की वजह से कॉल करेंगे ही. प्रशासन में बैठे लोगों की समझ में क्यों नहीं आता कि ख़ुद की उनकी अक्षमता की वजह से समस्या ज़्यादा खड़ी हो रही है. एसएमएस बंद हैं, लेकिन कश्मीर में रोज़ाना हज़ारों की संख्या में प्रदर्शन हो रहे हैं. किसी बच्चे या जवान की मौत होती है तो उसके जनाज़े में हज़ारों लोग शामिल होते हैं. कैसे संदेश पहुंचते हैं एक-दूसरे के पास.

कश्मीर का दर्द आज तक देश के सामने आया ही नहीं. हमने हमेशा कश्मीर को भारत के सामंती चश्मे से देखा. हमने कभी कश्मीर को अपने साथ माना ही नहीं. चाहे भारत की सरकार रही या भारत का मीडिया, हमने कश्मीर के दर्द पर हमेशा नमक छिड़का. हम भूल गए कि आज़ादी के समय हम भारत देश के स्वाभाविक व जन्मजात नागरिक थे, लेकिन कश्मीर के लोगों के पास तो विकल्प चुनने का मौक़ा था. कश्मीर एक आज़ाद रियासत थी, जहां के महाराजा ने कश्मीर का विलय भारत में किया था. विलय के समय और बाद में कश्मीरियों को आश्वासन दिए गए थे. हमें पता था कि हम यह आश्वासन पूरे नहीं कर पाएंगे, लेकिन हमने कभी इसकी वजहें कश्मीरियों को नहीं बताईं.

कश्मीरियों की मासूमियत, कश्मीरियों का सीधापन हमारे लिए बचाव का आसान रास्ता बन गया. हमारे यहां से अच्छा चावल जाता था, लेकिन वह कश्मीर जाने के बजाय बाजार पहुंच जाता था तथा मोटा चावल कश्मीर के लोगों को मिल पाता था. कश्मीर में सत्ता पर क़ाबिज़ लोग पचास साल तक भ्रष्टाचार में पीएचडी करते रहे और भारत सरकार के पास सुनने का समय नहीं रहा. कश्मीर में आज़ादी के चालीस साल बाद तक न स्कूल, न स्वास्थ्य, न उच्च शिक्षा, न रोज़गार और न ही विकास की कोई योजना बनी. राष्ट्रीयकृत बैंक पर्यटन उद्योग की रीढ़ माने जाने वाली टैक्सी के लिए कश्मीरियों को नई कार के लिए लोन नहीं देते थे, जबकि पांच सितारा होटलों या बाहरी लोगों को यही लोन आसानी से मिल जाता था. आज भी देश के किसी भी हिस्से में सफ़र कीजिए, चाहे रेल से या हवाई जहाज से आपको बंगाली, तमिल, कन्नड़, तेलुगु, मराठी, गुजराती सभी भाषाभाषी यात्री मिल जाएंगे, क्योंकि वे हर जगह काम करते हैं, लेकिन कहीं भी कश्मीरी बोलने वाला नहीं मिलेगा. कश्मीर के लोगों को हमने कश्मीर से बाहर निकलने ही नहीं दिया, उनके लिए न कश्मीर में रोज़गार के अवसर हैं और न ही कश्मीर के बाहर. कश्मीर के लोगों की तकलीफ़ हमें हमेशा पाकिस्तान प्रेरित लगी. देश के दूसरे हिस्सों में समस्याओं की कमी नहीं है. किसान, मज़दूर, छात्र, दलित, पिछड़े, आदिवासी सभी विकास और लोकतंत्र से अलगाव की समस्याओं से परेशान हैं और आवाज़ भी उठाते हैं, पर उन्हें पाकिस्तान प्रेरित नहीं माना जाता. हमारी बेरुखी, हमारी संवेदनहीनता और हमारे द्वारा पोषित भ्रष्टाचार से पीड़ित कश्मीर के शुरुआती विरोध को पाकिस्तान ने समर्थन भी दिया और हवा भी दी. कश्मीर के लोगों के एक हिस्से को लगा भी कि पाकिस्तान के साथ जाना बेहतर होता. पर यह सोच दस साल के भीतर बदल गई. कश्मीरियों को पाकिस्तान वाले कश्मीर की हक़ीक़त और ख़ुद पाकिस्तान में पैदा हुई समस्याओं पर पाकिस्तान की बेबसी का जैसे ही एहसास हुआ, वे पाकिस्तान की भाषा से अलग भाषा बोलने लगे. जो पाकिस्तान अपनी समस्याएं सुलझाने में पूर्णतया असफल राष्ट्र का दर्जा पा रहा तो, जो आतंकवाद, भ्रष्टाचार और ग़रीबी से जूझने में अफ़्रीकी देशों की बराबरी कर रहा हो, वह कश्मीर के बारे में सिर्फ़ ज़ुबानी हमदर्दी ही दिखा सकता है, यह कश्मीरियों की समझ में आ गया है.

कश्मीरियों की मासूमियत, कश्मीरियों का सीधापन हमारे लिए बचाव का आसान रास्ता बन गया. हमारे यहां से अच्छा चावल जाता था, लेकिन वह कश्मीर जाने के बजाय बाज़ार पहुंच जाता था तथा मोटा चावल कश्मीर के लोगों को मिल पाता था. कश्मीर में सत्ता पर क़ाबिज़ लोग पचास साल तक भ्रष्टाचार में पीएचडी करते रहे और भारत सरकार के पास सुनने का समय नहीं रहा.

लेकिन इस सारी कहानी में भूख, ग़रीबी, बेकारी, विकासहीनता और भविष्य काला होने का दर्द कश्मीरियों में इतना हौसला भर गया कि वे आंख में आंख डालकर बात करने लगे. जान देना उनके लिए खेल बन गया है, वैसे ही, जैसे कश्मीर में कुछ तत्वों का जान लेना खेल बन गया है. देश में कहीं प्रदर्शन हो, पहले लाठीचार्ज, फिर आंसू गैस, वाटर कैनन और फिर गोली चलती है, पर कश्मीर में सिर्फ़ गोली चलती है और वह भी सर या सीने को निशाना बनाकर. कश्मीर की धरती से हमें प्यार है या हम वहां के लोगों से भी प्यार करते हैं. क्या वहां के बच्चे हमें अपने बच्चों जैसे नहीं लगते? प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह कहते हैं कि कश्मीर में नौजवानों के साथ बच्चे भी प्रदर्शन में हिस्सा लेने लगे हैं. उन्हें अगर यह चिंता में डालता है तो वह इसे कश्मीर में सुरक्षाबलों को क्यों नहीं बतलाते?

क्यों नहीं हम कश्मीरियों को बतलाते कि आटोनॉमी का मतलब क्या है और क्यों इसकी बहस वहां नहीं होने देते. उन्हें अगर अब भी नहीं हम यह विश्वास दिलाएंगे कि हम उन्हें अपने जैसा मानते हैं तो कब विश्वास दिलाएंगे. पूरी कश्मीर घाटी भारत को अपना दुश्मन मानने लगी है, कोई सभ्य भाषा में यह बात कहता है तो कोई सख्त और नंगी भाषा में. अफ़सोस इस बात का है कि भारत के राजनैतिक दलों के पास, जिसमें सत्तारूढ़ और विपक्ष शामिल है, कश्मीर को लेकर न कोई समझ है, न जानकारी है और न कोई योजना है. ठीक यही हाल कश्मीर के राजनैतिक दलों का भी है. वे भी कश्मीर को लेकर एकराय नहीं हैं. कश्मीर के सभी मुख्यमंत्री वहां केंद्र के एजेंट माने गए. शेख अब्दुल्ला सबसे बड़े नेता हुए, पर उनके साथ हुआ व्यवहार कश्मीरियों को आज भी गुस्सा दिलाता है. फारूक़ अब्दुल्ला और अब उमर अब्दुल्ला के बीच कश्मीरी थोड़ा फ़र्क़ करते हैं. उन्हें लगता है कि उमर अब्दुल्ला अगर समस्या के समाधान का रास्ता भी शुरू कर सकें तो यह बड़ी उपलब्धि होगी. कश्मीरियों को लगता है कि उमर अब्दुल्ला उनका चेहरा हैं, लेकिन उन्हें वह अपरिपक्व भी मानते हैं. यह छाप भी उमर ने अपनी नादानियों से छोड़ी है.

आज कश्मीर की समस्याओं को टालने या अनदेखा करने का समय नहीं है. देर न हो, इससे पहले सरकार और राजनीतिक तंत्र को अपनी ग़लती सुधारनी होगी तथा कश्मीरियों को यह विश्वास दिलाना होगा कि हम उनके जीने के अधिकार का सम्मान करते हैं और उन्हें वैसी ही इज़्ज़त देते हैं, जैसे किसी और देशवासी को देते हैं. सुरक्षाबलों को सख्त हिदायत मिलनी चाहिए कि सर या सीने पर गोली नहीं चलाई जाए. आतंकवादियों और घुसपैठियों के लिए बनी गोली अपने ही बच्चों और नागरिकों पर चलाना अपराध है. मनमोहन सिंह और सोनिया गांधी पर इतिहास बनाने या बिगाड़ने की ज़िम्मेदारी है. आज वक़्त है कि हम माफ़ी भी मांगें, ग़लती भी सुधारें और एक नई शुरुआत करें, जिससे कश्मीर का रहने वाला भारत का नागरिक होने की भावना से अपने को अलग न माने.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

संघ परिवार भगवा आतंकवाद पर क्यों ख़फ़ा है

ज़ाहिद ख़ान

संघ परिवार आजकल केंद्रीय गृहमंत्री पी चिदंबरम के बयान से खपा है. आतंकवाद पर अपने ताजा बयान से वह संघ परिवार के निशाने पर आ गए हैं. संघ परिवार उन्हें पानी पी-पीकर कोस रहा है. चिदंबरम का कसूर महज़ इतना है कि उन्होंने एक सम्मेलन में दहशतगर्दी के भगवा चेहरे को मुल्क का सबसे बड़ा दुश्मन बताया था. मालेगांव, मक्का मस्जिद और अजमेर शरीफ दरगाह में हुए हालिया आतंकी हमलों के संदर्भ में उन्होंने कहा था कि मुल्क में भगवा आतंक का नया आयाम सामने निकल कर आया है. बम विस्फोट की कई घटनाओं में हिंदू चरमपंथियों के नाम सामने आने के बाद, ज़ाहिर है यह उनकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति थी और उनकी इस चिंता पर हम सभी को गंभीरता से विचार करना चाहिए था, लेकिन हुआ इसका उलटा. आतंकवाद पर आए चिदंबरम के इस साहसिक बयान पर संघ परिवार तो संघ परिवार, कांग्रेस पार्टी के अंदर भी उनकी आलोचना होने लगी. मानो चिदंबरम ने भगवा आतंकवाद का नाम लेकर कोई बड़ा गुनाह कर दिया हो.

ग़ौरतलब है कि चिदंबरम ने अभी हाल में सभी राज्यों के पुलिस महानिदेशकों और महानिरीक्षकों के वार्षिक सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में अफसरों को और ज़्यादा होशियार रहने की ज़रूरत पर बल देते हुए कहा था कि मुल्क में नौजवानों में कट्टर विचार भरने के मामले में कोई कमी नहीं आई है. नया दौर भगवा आतंकवाद का है, जो इन दिनों निकल कर सामने आ रहा है. कई हिंदू संगठनों के नाम हालिया बम विस्फोटों में उजागर हुए हैं. ज़ाहिर है, चिदंबरम ने जब कोई ऐसा बयान दिया है तो बहुत सोच-समझ कर दिया है. वह देश के गृहमंत्री हैं और उनकी ज़िम्मेदारी बनती हैं कि वह देश को आने वाले ख़तरों से आगाह करें. चिदंबरम के बयान से पहले तमाम जांच एजेंसियां भी अपनी तहक़ीक़ात में यह बात साबित कर चुकी हैं कि मुल्क में बीते कुछ सालों में जो बम विस्फोट हुए, उनमें संघ परिवार से जुड़े कट्टरपंथी संगठनों का हाथ है. मालेगांव बम विस्फोट की महज़ एक तहक़ीक़ात ने कई बम विस्फोटों का पर्दाफाश कर दिया. कल तक जो बम विस्फोट जेहादी आतंकवाद के खाते में दर्ज थे, वे सब आज संघ परिवार के खाते में हैं. बावजूद इसके संघ परिवार को अपने किए का कोई पछतावा नहीं. बल्कि जब भी इन बम विस्फोटों, अन्य बम विस्फोटों की साजिशों और सांप्रदायिक दंगों में उसके सहयोगी संगठनों का नाम सामने आता है, वह बड़ी बेशर्मी से उन्हें बचाने में लग जाता है. और उसमें संघ का पूरा साथ देते हैं उसके सियासी हाथ भाजपा और शिवसेना. भाजपा और शिवसेना ग़लतबयानी करके देश की जनता को गुमराह करते हैं. चिदंबरम के हालिया बयान पर लोकसभा- राज्यसभा के अंदर और बाहर जिस तरह इन दोनों पार्टियों ने अपना रुख़ दिखाया है, वह इसी बात की तस्दीक करता है.

दरअसल गृहमंत्री पी चिदंबरम ने भगवा आतंकवाद शब्द का जिन अर्थों में इस्तेमाल किया है, उसके मायने साफ़ हैं. भगवा आतंकवाद शब्दावली से उनका सीधा-सीधा मतलब कट्टर हिंदूवादी संगठनों से था, जिनके नाम अभी हाल की कई घटनाओं में निकल कर सामने आए हैं. मालेगांव, मोडासा, मक्का मस्जिद, अजमेर शरीफ़ दरगाह और समझौता एक्सप्रेस में हुए बम विस्फोटों के मास्टरमाइंड स्वामी असीमानंद, सुनील जोशी, राम जी कलासांगरा, संदीप डांगे, कर्नल श्रीकांत पुरोहित एवं अन्य आरोपियों का ताल्लुक किन संगठनों-विचारधारा से है, सब जानते हैं.

भगवा आतंकवाद पर सदन के अंदर सबसे ज़्यादा मुखर थी शिवसेना. वह शिवसेना, जिसके नेता बाल ठाकरे, मनोहर जोशी और सैकड़ों कार्यकर्ता महाराष्ट्र में हुए कई सांप्रदायिक दंगों में दागी ठहराए गए. दिसंबर 1992 और जनवरी 1993 में मुंबई में हुए भयानक दंगों के अहम शिल्पकारों में से एक मनोहर जोशी, बाबरी विध्वंस के नायक मुरली मनोहर जोशी और योगी आदित्यनाथ खास तौर पर संसद में भगवा आतंकवाद की पैरवी करते नज़र आए. संघ के लाडले मुरली मनोहर जोशी तो गुस्से में इतने बेकाबू हो गए कि उन्होंने गृहमंत्री चिदंबरम को भगवा आतंकवाद शब्द के इस्तेमाल पर चेतावनी तक दे डाली कि देश में इसकी भारी प्रतिक्रिया होगी. साल 2002 में नरेंद्र मोदी के गुजरात में क्रिया-प्रतिक्रिया का नंगानाच देख चुके देशवासी अंदाज़ा लगा सकते हैं कि प्रोफेसर जोशी का इशारा किस ओर था. चिदंबरम का यह बयान जैसे निशाने पर तीर की तरह लगा. चोर की दाढ़ी में तिनका. जैसा कि अंदेशा था, इस बयान से सबसे ज़्यादा खपा संघ परिवार है. जब आंच ख़ुद तक आई, तब संघ परिवार और भाजपा दोनों को ही इस बात का ख्याल आया कि आतंकवाद तो सिर्फ़ आतंकवाद होता है और उसकी कोई जाति या मजहब नहीं होता. कुल मिलाकर जो लोग आज भगवा आतंकवाद के नाम से हिंदू चरमपंथियों को मुख़ातिब करने में परहेज कर रहे हैं, यह वही लोग हैं, जो अभी तक मुल्क में होने वाली हर आतंकी घटना को मुस्लिम, इस्लाम या जेहादी आतंकवाद का नाम देकर उसे हिंदुस्तानी मुसलमानों से जोड़ देते थे. फिर संघ परिवार के उस शातिर जुमले को भला कौन भूल सकता है, जिसके ज़रिए वह बेहद शातिराना अंदाज़ में सारे देश के सामने यह जमकर प्रचारित करता था कि यह माना, देश के सारे मुसलमान आतंकवादी नहीं हैं, लेकिन आतंकी घटनाओं में अभी तक जो पकड़े गए हैं, वे मुसलमान हैं. दरअसल गृहमंत्री पी चिदंबरम ने भगवा आतंकवाद शब्द का जिन अर्थों में इस्तेमाल किया है, उसके मायने साफ हैं. भगवा आतंकवाद शब्दावली से उनका सीधा-सीधा मतलब कट्टर हिंदूवादी संगठनों से था, जिनके नाम अभी हाल की कई घटनाओं में निकल कर सामने आए हैं. मालेगांव, मोडासा, मक्का मस्जिद, अजमेर शरीफ दरगाह और समझौता एक्सप्रेस में हुए बम विस्फोटों के मास्टरमाइंड स्वामी असीमानंद, सुनील जोशी, राम जी कलासांगरा, संदीप डांगे, कर्नल श्रीकांत पुरोहित एवं अन्य आरोपियों का ताल्लुक किन संगठनों-विचारधारा से है, सब जानते हैं. धर्म और भगवा झंडे की आड़ में इन दहशतगर्दों ने पूरे देश में ख़ूब गुल खिलाए. भगवा चोला पहन कर ये दहशतगर्द गुपचुप अपनी देश विरोधी गतिविधियों में लगे रहे और जांच एजेंसियां अंधेरे में तीर मारती रहीं. वह तो मालेगांव बम विस्फोट की तहक़ीक़ात के बाद जब इन जांच एजेंसियों ने अपना दायरा हिंदू चरमपंथी संगठनों की ओर बढ़ाया, तब जाकर नए राजफाश हुए, वरना देश में दहशतगर्दी की यह वारदातें और भी आगे चलतीं.

भगवा आतंकवाद बयान पर जो लोग अपना एतराज जता रहे हैं, उनकी नीयत और मंशा साफ है. एक बार फिर वे जज़्बाती शब्दों का सहारा लेकर असली मुद्दे को कहीं और मोड़ना चाहते हैं, जिससे पूरे देश का ध्यान दक्षिणपंथी आतंकवाद से हटकर एक ग़ैर ज़रूरी बहस में बंट जाए. संघ परिवार शुरू से लेकर आज तक यह काम बख़ूबी करता आया है. आज फिर संघ ख़ुद को चारों ओर से घिरता देख, ख़ुद को बचाने के लिए पूरी ताक़त से इस मुहिम में लग गया है. कभी वह भगवा शब्द को धर्म से जोड़ता है तो कभी सारे हिंदुओं से. केंद्रीय गृहमंत्री पी चिदंबरम ने पुलिस अफसरों के सम्मेलन में यदि भगवा आतंकवाद की बात की है तो पूरी तरह जानते-बूझते. हां एक बात और, देश के अंदर नौजवानों में उग्र विचारों का पोषण कौन कर रहा है? यह भी सब अच्छी तरह से जानते हैं. विश्व हिंदू परिषद, बजरंग दल, सनातन संस्था, श्रीराम सेना, हिंदू मुन्नानी और अभिनव भारत जैसे संगठन किस वृक्ष की शाखाएं हैं और इनके क्या धार्मिक एवं रचनात्मक क्रियाकलाप हैं, बीते दो दशकों के दौरान सारे देश के सामने आ चुके हैं. कुल मिलाकर चिदंबरम का संदेश साफ है, आतंकवाद की सख्त मुफ़ालफ़त और उससे कड़ा मुक़ाबला, क्योंकि किसी भी तरह के आतंकवाद की तरफ़ से लगातार आंखें मूंदे रहना आख़िरकार देश की सुरक्षा से खेलना है. आतंकवाद सिर्फ़ आतंकवाद होता है और उसमें भेद करना, कोताही बरतना हमारे देश की हिफ़ाज़त के एतबार से कहीं न कहीं ख़तरनाक होगा.

(लेखक अल्पसंख्यक मामलों के जानकार हैं)

feedback@chauthiduniya.com

उत्तर प्रदेश के वैज्ञानिकों ने तीन तरह के आमों को मिलाकर उसमें नशा पैदा किया है. उन्होंने दशहरी, लंगड़ा और चौसा आमों को मिलाकर यह शराब बनाई है.

सूचना का अधिकार
जानने का अधिकार
जीने का अधिकार
चौथी दुनिया की पहल

सूचना का अधिकार ज़रूरी है

सूचना क़ानून को लागू हुए क़रीब पांच साल हो गए. इस दौरान सूचना क़ानून ने आम आदमी को कितना शक्तिशाली बनाया, आम आदमी कैसे सवाल पूछकर व्यवस्था में लगी दशकों पुरानी जंग छुड़ाने में सफल रहा, अपने अधिकार को पाने में सफल रहा आदि बिंदुओं से जुड़े चंद उदाहरण इस अंक में दिए जा रहे हैं, ताकि आप सभी सूचना क़ानून की ताक़त को जान सकें और इसके इस्तेमाल के लिए दूसरों को भी प्रेरित कर सकें.

बिना रिश्वत नौकरी

आरटीआई अब लोगों को बिना रिश्वत दिए नौकरी और प्रमोशन भी दिला रहा है. रेवाड़ी की सपना यादव ने गुड़गांव ग्रामीण बैंक में प्रोबेशनरी अधिकारी पद के लिए आवेदन किया था. चयन नहीं हो पाया तो आरटीआई के तहत सपना ने चयन प्रक्रिया से संबंधित प्रश्न पूछे. मामला सीआईसी गया, बैंक ने सूचना तो उपलब्ध नहीं कराई, अलबत्ता सपना को फोन कर प्रोबेशनरी अधिकारी के तौर पर बैंक ज्वाइन करने का अनुरोध ज़रूर किया. बिहार के मधुबनी ज़िले के चंद्रशेखर ने जब पंचायत शिक्षक नियुक्ति के लिए घूस नहीं दी तो उन्हें यह कहकर नियुक्त नहीं किया गया कि जिस महाविद्यालय से उन्होंने प्रशिक्षण हासिल किया है, वह फ़र्ज़ी है. जबकि उसी महाविद्यालय से प्रशिक्षित अन्य लोगों की नियुक्ति कर दी गई. चंद्रशेखर ने जब प्रखंड विकास अधिकारी से इस मामले में सवाल किए तो उनकी नियुक्ति पंचायत शिक्षक के रूप में कर दी गई. उड़ीसा वन विकास निगम में सेक्शनल सुपरवाइज़र के पद पर कार्यरत गणपति बहरा को वरिष्ठता के आधार पर प्रमोशन नहीं दिया गया, जबकि उनके कनिष्ठों को प्रमोशन दे दिया गया. इस संबंध में आरटीआई आवेदन डालने पर उन्हें सेक्शनल सुपरवाइज़र से सब डिवीज़न मैनेजर के पद पर प्रमोट कर दिया गया.

पेंशन की टेंशन नहीं

बुज़ुर्गों के लिए भी आरटीआई जादू की छड़ी साबित हुआ है. उड़ीसा की 70 वर्षीय कनकलता त्रिपाठी की 13 सालों से लटकी पेंशन आरटीआई आवेदन डालने के बाद एक महीने में ही मिल गई. बिहार के मधुबनी ज़िले की गंगापुर पंचायत के 200 पेंशनार्थी राष्ट्रीय वृद्धावस्था एवं सामाजिक सुरक्षा पेंशन पाने के लिए उप डाकघर में खाता खुलवाने हेतु महीनों चक्कर लगाते रहे. आरटीआई के तहत लोगों ने आरटीआई आवेदन डालकर मधुबनी के डाक अधीक्षक से इस बारे में सवाल पूछे. डाक अधीक्षक ने मामले की जांच की. दोषी पोस्टमास्टर गणेश सिंह को तत्काल निलंबित करते हुए सभी पेंशनधारियों का खाता दूसरे डाकघर में खुलवा दिया गया.

राशन दुकानदारों की ख़बर

राशन चोरी और राशनकार्ड न बनना, ये दो समस्याएं हमारे देश में आम हैं, लेकिन जन वितरण प्रणाली में लगे घुन को भी आरटीआई ने धीरे-धीरे साफ़ किया है. दिल्ली में तो इसके सैकड़ों उदाहरण हैं. पुरी की अनासारा गांव की 68 वर्षीय जनातुन बेगम और उनके पति को अंत्योदय योजना के तहत मिलने वाला अनाज आरटीआई की वजह से दोबारा मिलने लगा. जहानाबाद ज़िले के कताई बिगहा गांव में ग्रामीणों को सही मात्रा में राशन और मिट्टी का तेल मिलने लगा है.

मिड डे मील में सुधार

अहमदाबाद में मिड डे मील योजना के तहत स्कूली बच्चों को दोयम दर्जे का भोजन मिलता था. भोजन में कई बार तो कीड़े भी पाए गए. भोजन की गुणवत्ता की जांच की कोई व्यवस्था नहीं थी. इस मामले में इंदुपुरी गोसाई ने आरटीआई के तहत जवाब-तलब किया तो न केवल लेबोरेट्री में भोजन की जांच हुई, बल्कि उसकी गुणवत्ता भी सुधरी और निगरानी की समुचित व्यवस्था हुई. यह सब एक सप्ताह के भीतर हो गया. इस तरह के अनेक मामले सामने आए हैं, जिनमें आरटीआई की बदौलत मिड डे मील व्यवस्था में गुणात्मक सुधार हो सका है.

पब्लिक स्कूल में एडमिशन

सूचना क़ानून का ही कमाल है कि दिल्ली की पुनर्वास बस्ती सुंदर नगरी में रहने वाला मोहन अब अर्वाचीन पब्लिक स्कूल में पढ़ता है. आरटीआई की बदौलत ही मोहन का दाखिला इस स्कूल में फ्रीशिप कोटे के तहत हो पाया है. दिल्ली में इस तरह के हज़ारों उदाहरण हैं. कल्याणपुरी में रहने वाली सुनीता ने तो सूचना के अधिकार का सहारा लेकर स्कूल की सभी छात्राओं को छात्रवृत्ति दिलाई. सुनीता ने आरटीआई के तहत छात्रवृत्ति न मिलने का कारण पूछा. दो दिनों बाद ही अधिकारी स्कूल में इस संबंध में जांच करने आए. सुनीता ने बेबाकी से प्रिंसिपल की शिक़ायत की. इसके कुछ दिनों बाद स्कूल की सभी छात्राओं को छात्रवृत्ति वितरित कर दी गई. इसी तरह हरियाणा के सोनीपत ज़िले के सिलारपुर मेहता गांव की साठ वर्षीय सुमित्रा देवी ने आरटीआई की मदद से न सिर्फ़ प्रशासन की लापरवाही उजागर की, बल्कि ग़रीब स्कूली लड़कियों के लिए साइकिल वितरण की सरकारी योजना और सर्वशिक्षा अभियान के तहत मिलने वाली स्कूल ड्रेस का लाभ भी छात्र-छात्राओं को पहुंचाया.

सड़क भी बनवाता है आरटीआई

देश के कई हिस्सों में सूचना के अधिकार ने सड़क निर्माण और मरम्मत में अहम भूमिका निभाई है. दिल्ली के मॉडल टाउन में रहने वाले मोहित अपने इलाक़े की सड़कों की दुर्दशा से परेशान थे. दिल्ली जल बोर्ड ने सीवर डालने के लिए उनके घर के आगे सड़क खोद दी थी. एमसीडी से इसी लापरवाही का जवाब मांगने के लिए मोहित ने आरटीआई दायर दी. आरटीआई की अर्ज़ी आते ही एमसीडी हरकत में आया और सड़क मरम्मत का कार्य एक महीने से भी कम समय में संपन्न हो गया. उड़ीसा में भी ऐसी ही एक मिसाल देखी गई. पुरी ज़िले के कोणार्क क्षेत्र के करमंगा गांव में आरटीआई की बदौलत रातोंरात सड़क बनवा दी गई.

पहले फेल, फिर पास

मलयनाथ नालंदा ओपन यूनिवर्सिटी से पत्रकारिता की पढ़ाई कर रहे थे. परीक्षा में फेल होने पर उन्होंने आरटीआई के तहत विश्वविद्यालय प्रशासन से अपनी उत्तर पुस्तिका दिखाने की मांग की. उत्तर पुस्तिका की दोबारा जांच की गई तो पता चला कि वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ईमेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं. हमारा पता है :

चौथी दुनिया
एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा (गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश, पिन -201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

अब आम से बनेगी शराब

शोधकर्ताओं ने आम से शराब बनाई है. उन्हें उम्मीद है कि एक दिन यह अंगूर से बनी पारंपरिक शराब को टक्कर दे सकेगी. उत्तर प्रदेश के वैज्ञानिकों ने तीन तरह के आमों को मिलाकर उसमें नशा पैदा किया है. उन्होंने दशहरी, लंगड़ा और चौसा आमों को मिलाकर यह शराब बनाई है. भारत आम का सबसे बड़ा उत्पादक देश है और यहां क़रीब एक हज़ार किस्म के रसीले आम पैदा होते हैं. रिसर्च टीम का नेतृत्व करने वाली नीलिमा गर्ग ने बताया, हमने सोचा कि अगर फ्रांस, इटली और ऑस्ट्रेलिया ने शराब उद्योग में अपना सिक्का इसलिए जमाया है कि वे अंगूर उत्पादक देश हैं तो हम अपनी खासियत का इस्तेमाल क्यों नहीं कर सकते? हमारे इलाक़े में बहुत आम होते हैं. जैसे हर किस्म के आम का स्वाद अलग होता है, वैसे हर शराब का स्वाद भी अलग होगा. भारत में हर तरह के आम होते हैं. सफेदा से लेकर चौसा तक और आमों का राजा अल्फांजो भी. वैज्ञानिकों के सामने सबसे बड़ी चुनौती थी कि आमरस को इतना तरल करना कि उससे शराब बन सके. नीलिमा गर्ग ने बताया कि आम में खमीर लाना मुश्किल काम नहीं है, क्योंकि उसमें बड़ी मात्रा में शुगर होती है, जो एल्कोहल का मुख्य स्रोत है. लेकिन गाढ़ेपन को काबू में रखने के लिए सावधानी रखनी पड़ती है. आम से बनी शराब हल्की सी पीली और मीठी होती है. इसमें 8-9 फ़ीसदी एल्कोहल है, जो आम शराब से थोड़ा कम है. भारत में अंगूर से शराब पश्चिमी और दक्षिणी महाराष्ट्र के साथ ही कर्नाटक में भी बनती है. वैज्ञानिकों को उम्मीद है कि आम के बाद ब्लैकबेरी और सेब से भी शराब बनाई जा सकेगी.

अजब-ग़जब नाम

अमेरिका के लस्टफुल कोर्ट नामक इलाक़े के निवासियों ने नाम से तंग आकर उसे बदलने के लिए अर्ज़ी दी है. जर्मनी में भी ऐसे कई शहर हैं, जिनके नाम अजीबोग़रीब हैं. उनका अर्थ भी अजीबोग़रीब है. अमेरिका के जार्जिया राज्य में मेकन शहर के लस्टफुल कोर्ट के निवासियों का कहना है कि इस नाम से लोगों में उन्हें लेकर ग़लत धारणाएं पैदा होती हैं. जब वे लोगों को बताते हैं कि वे वहां रहते हैं तो हर कोई उन पर हंसता है. इसलिए अब वे चाहते हैं कि उस इलाक़े का नाम बदल दिया जाए. शिक़ायत मिलने के बाद ज़िला अधिकारी लोंजी एडवर्ड्स ने कहा है कि वह इस पर विचार करेंगे और उन्होंने आशा जताई कि जल्द ही नाम बदल दिया जाएगा. कोई नहीं जानता कि लस्टफुल कोर्ट को यह नाम कहां से मिला.

सिर्फ़ अमेरिका में ही नहीं, पूरी दुनिया में ऐसे कई शहर और गांव हैं, जिनके अजीब नाम हैं. खासतौर से जर्मनी में तो ऐसे कई शहर हैं. इनमें सबसे मशहूर है शहर एसन, जिसका मतलब है खाना. हालांकि इस नाम पर न तो लोगों को अब हंसी आती है और न ही शर्म, लेकिन कुछ नाम ऐसे हैं, जिन्हें लेने का भी मन नहीं करता. डेप्पनहाउजन (बेवकूफों का बसेरा), कात्जनहिर्न (बिल्ली का दिमाग़), आलमोजन (भीख), बेन्जीन (पेट्रोल), ड्रोगन (ड्रग्स), किलर (हत्यारा), होएले (नर्क), एंडे (अंत), नीडर राइसन (उजाड़ना), लीबलोस (प्रेमरहित). बुरे ही नहीं, कुछ नाम अच्छे भी होते हैं, भले ही इनकी संख्या काफी कम है. मिसाल के तौर पर हिमेलराइश (स्वर्ग का राज्य) या फिर गाबे गॉटेस यानी ईश्वर की देन.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल): शिक्षा के क्षेत्र में सफलता के योग बने हुए हैं. लव पार्टनर की ओर से शांति एवं खुशियां मिलेंगी. उसके साथ कहीं बाहर जाने का कार्यक्रम बनेगा. घर में किसी परेशानी की वजह से पैसा ख़र्च होगा. अचानक कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई): किसी व्यक्ति के साथ कोई यात्रा दिलचस्प रहेगी. बुज़ुर्गों के स्वास्थ्य से संबंधित कोई चिंता हो सकती है. दिल के मामले में कोई महिला आपके लिए फ़ायदेमंद रहेगी. विद्यार्थियों को उच्च अध्ययन में सफलता मिलेगी. कोई लंबित कार्य पूरा हो जाएगा.

मिथुन (21 मई से 20 जून): आयात-निर्यात के कारोबार में अच्छा लाभ मिल सकता है. आप एक साथ कई काम हाथ में ले लेंगे. मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. संतान के संबंध में कोई सुखद समाचार मिल सकता है. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई): अपने संपर्क क्षेत्र का विस्तार करेंगे. पारिवारिक यात्रा की रूपरेखा बन सकती है. दोस्तों के साथ पिकनिक का कार्यक्रम बनेगा. कोई नई शुरुआत आपको खुशियां और प्यार देगी. वित्तीय फ़ायदे होंगे और आप रचनात्मक कार्यों में संलग्न रहेंगे.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त): जीवन में सकारात्मक बदलाव आएंगे. अगर प्रोफेशनल वर्क पर फोकस करके चलेंगे तो अच्छा रिज़ल्ट मिलेगा. शिक्षा के क्षेत्र में किसी प्रतियोगिता की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग बने हुए हैं. पेट संबंधी कोई शिक़ायत हो सकती है.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर): आय के क्षेत्र में नए रास्ते खुलेंगे. रचनात्मक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. आप कहीं यात्रा करने जा रहे हैं तो अपने सामान के प्रति सचेत रहें. स्वास्थ्य अचानक बिगड़ सकता है. परिवार में किसी से झगड़ा हो सकता है.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर): काम में अतिरिक्त मेहनत आपको फ़ायदा कराएगी. स्वास्थ्य को लेकर कई तरह की दिक़्क़तें आएंगी. कोई नौजवान आपके लिए नुक़सानदेह हो सकता है. धार्मिक यात्रा का कार्यक्रम बनेगा. दिल के मामले में शांति मिलेगी.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर): परिवारीजनों का सहयोग मिलेगा. वित्तीय फ़ायदे धीरे-धीरे, लेकिन अच्छे होंगे. बहुत ज़्यादा यात्रा करने से सेहत बिगड़ सकती है. आपकी आर्थिक स्थिति में कुछ बदलाव आएंगे. निवेश से फ़ायदा होगा.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर): आर्थिक क्षेत्र में किया जा रहा प्रयास सफल साबित होगा. जायदाद संबंधी मामले सुलझने से राहत मिलेगी. इस सप्ताह आप कुछ ऐसी रणनीति अपनाएंगे, जिससे आपके विरोधियों और शत्रुओं का सिर नीचा हो सकता है.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी): मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. युवाओं को उनके करियर में बेहतर अवसर मिलेंगे. विरोधियों को अपनी बात आसानी से समझा सकेंगे. वाणी पर नियंत्रण बनाएं रखें, अन्यथा विवाद की स्थिति उत्पन्न हो सकती है.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी): किसी के मामलों में न उलझें तो बेहतर होगा, नहीं तो संबंध बिगड़ सकते हैं. प्रियजनों की मदद करके ख़ुश होंगे. नेत्र संबंधी शिक़ायत हो सकती है. लाभ कमाने के लिए अथक परिश्रम करना पड़ेगा.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च): व्यवसाय में कुछ नया करने की सोच रहे हैं तो सोच-समझ कर ही निर्णय लें. राजकीय कार्यों में बेहतर सफलता मिलेगी. पारिवारिक ज़रूरतों को पूरा करेंगे. अटके काम पूरे हो जाएंगे. विरोधियों को मात देने में कामयाब रहेंगे

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना के लिए आम जनता को गोलबंद करने में सफल रहे माओवादियों का राजनीतिक व्यवहार नेपाल में लोकतंत्र के भविष्य के लिहाज़ से अच्छा संकेत नहीं हैं.

माओवादी अपने सिद्धांतों से भटक रहे हैं

नेपाल असमंजस के दौर से गुज़र रहा है. 30 जून को माधव कुमार नेपाल द्वारा प्रधानमंत्री पद से इस्तीफ़ा दिए जाने के बाद से यह देश राजनीतिक नेतृत्व के अभाव का शिकार है. प्रतिनिधि सभा में छह-सात बार मतदान के बाद भी प्रधानमंत्री पद के दोनों उम्मीदवारों पुष्प कमल दहल प्रचंड और रामचंद्र पौडेल में से किसी को आवश्यक बहुमत हासिल नहीं हो पाया. देश की आम जनता निराश है, वहीं राजनीतिक पार्टियां अपने नफ़ा-नुक़सान को लेकर ज़्यादा चिंतित हैं. उन्हें इस बात की कोई फिक्र नहीं कि देश के नए संविधान के निर्माण का काम अटका पड़ा है, विकास कार्य पूरी तरह बंद पड़े हैं, सालाना बजट तक पास नहीं हो पाया है. वे केवल इस बात को लेकर फिक्रमंद हैं कि नई सरकार में उनकी अहमियत बनी रहे. कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ नेपाल (माओवादी) हो या नेपाली कांग्रेस, दोनों दल अपने उम्मीदवार को प्रधानमंत्री पद तक पहुंचाने के लिए हर हथकंडा अपना रहे हैं. सबसे ख़राब हालत तो माओवादियों की है. संविधान सभा में सबसे ज़्यादा सदस्यों वाली यह पार्टी सत्ता पाने के लिए इतनी व्याकुल है कि विदेशी ताक़तों से मदद लेने में भी परहेज नहीं कर रही. सिद्धांतवादी पार्टी होने का दावा करने वाले माओवादियों का जब यह हाल है तो नेपाल में लोकतंत्र की हालत की सहज ही कल्पना की जा सकती है. प्रधानमंत्री पद के लिए छठे दौर के मतदान से ठीक पहले नेपाली मीडिया में एक सीडी को लेकर चर्चाओं का दौर गर्म रहा. इस सीडी में यूपीसीएन (माओवादी) के विदेश प्रभाग के मुखिया कृष्ण बहादुर महारा को संविधान सभा के सदस्यों का समर्थन हासिल करने के लिए चीन से आर्थिक मदद की मांग करते हुए दिखाया गया है. एक अज्ञात चीनी अधिकारी से बात करते हुए महारा विदेश में गुप्त मीटिंग के लिए तैयार होते हैं और प्रचंड की अनुमति प्राप्त होने का भरोसा भी दिलाते हैं. हालांकि महारा ने इस सीडी को फ़र्ज़ी क़रार दिया, लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि इससे माओवादियों की सिद्धांतविहीनता और सत्तालोलुपता सतह पर आ जाती है.

नेपाल की मौजूदा राजनीतिक हालत ऐसी है कि सत्ता की चाबी चार मधेशी पार्टियों के गठबंधन के पास है. 82 सदस्यों के साथ यह गठबंधन दोनों में से किसी भी उम्मीदवार को प्रधानमंत्री बना सकता है, लेकिन मतदान की प्रक्रिया से अब तक दूर रहा है. गठबंधन के प्रतिनिधियों की माओवादियों के साथ कई दौर की बातचीत हो चुकी है और माओवादी उनकी अधिकांश मांगों को मानने के लिए तैयार भी हैं, लेकिन चारों दलों के बीच एकमत नहीं होने के कारण नतीजा सिफर ही रहा है. सीधी उंगली से घी निकलते न देख माओवादी पैसे के दम पर उन्हें ख़रीदने की कोशिश कर रहे हैं. सीडी में महारा को यह कहते हुए दिखाया गया है कि उन्हें 50 सदस्यों के समर्थन की ज़रूरत है और इसके लिए 50 करोड़ नेपाली रुपये की दरकार है. महारा इसके लिए हांगकांग में गोपनीय मीटिंग के लिए भी हामी भरते हैं. माओवादियों की ऐसी हरकतें ज़्यादा अखरती हैं, क्योंकि राजनीति में नैतिकता और मूल्यों की दुहाई देने वाली पार्टी ही यदि सत्ता के लालच में इस कदर गिर जाए तो देश में लोकतंत्र के भविष्य पर सवालिया निशान लग जाते हैं. माओवादी देश के अंदरूनी मामलों में विदेशी दखलंदाज़ी से भी लगातार इंकार करते रहे हैं और भारत के प्रति लचीला रवैया अपनाने के चलते नेपाली कांग्रेस पार्टी को लगातार निशाना बनाते रहे हैं, लेकिन सीडी प्रकरण से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि सत्ता के लिए उन्हें चीन से मदद मांगने में भी कोई गुरेज नहीं है.

राजशाही के ख़िलाफ़ लोगों की भावनाओं को उभार कर देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना के लिए उन्हें गोलबंद करने में सफल रहे माओवादियों का राजनीतिक व्यवहार नेपाल में लोकतंत्र के भविष्य के लिहाज़ से अच्छा संकेत नहीं है. राजशाही को समाप्त हुए ज़्यादा दिन नहीं हुए, लेकिन तमाम राजनीतिक दल जनता की नज़रों में ख़ारिज हो चुके हैं. माओवादियों के दबाव में माधव कुमार नेपाल की सरकार को सत्ता से बेदख़ल होना पड़ा, लेकिन तीन महीने बीत जाने के बाद नई सरकार का ब्लूप्रिंट तक तैयार नहीं हो पाया है. माओवादियों के अड़ियल रवैये के चलते पूरा देश आज दो धड़ों में बंट चुका है. अपनी जायज़-नाजायज़ मांगों को मनवाने के लिए देश की राजनीतिक व्यवस्था को गिरवी रखने वाले माओवादी राजनीतिक पार्टियों के बीच ही नहीं, बल्कि जनता के बीच भी अपनी विश्वसनीयता खोते जा रहे हैं. आज नेपाल एक दोराहे पर खड़ा है. एक ग़लत क़दम उसे राजनीतिक आत्महत्या की कगार पर पहुंचा सकता है. डर इस बात का है कि माओवादियों की सिद्धांतविहीनता और सत्तालोलुपता कहीं इस अंदेशे को सच्चाई में तब्दील न कर दे.

आदित्य पूजन
aditya@chauthiduniya.com

राजशाही पर फिर टिकी निगाहें

प्रचंड को प्रधानमंत्री बनाने के लिए चीन से आर्थिक मदद की मांग करने वाले माओवादियों की सिद्धांतविहीनता चौंकाती ज़रूर है, लेकिन राजनीतिक भ्रष्टाचार के दोषी अकेले माओवादी ही नहीं हैं. मीडिया में आ रही ख़बरों के अनुसार, देश की दूसरी सबसे बड़ी राजनीतिक पार्टी नेपाली कांग्रेस भी उद्योगपतियों और आम जनता से धन उगाही में लिप्त है. बांके में पार्टी की जनरल एसेंबली की बैठक के लिए स्थानीय व्यवसायियों, सरकारी अधिकारियों, स्कूल-कॉलेजों और यहां तक कि आम लोगों से भी धन की मांग की जा रही है. सच्चाई यह है कि नेपाल की हर राजनीतिक पार्टी आज स्वार्थसिद्धि में लगी है. क़रीब दो साल पहले जब राजशाही को समाप्त कर देश में लोकतंत्र की नींव डाली गई थी तो पूरा राष्ट्र एक नए जोश और उम्मीद से सराबोर था, लेकिन आज वह सारा जोश ग़ायब है और सारी उम्मीदें काफ़ूर हो चुकी हैं. माओवादी हर हाल में सत्ता पर क़ाबिज होना चाहते हैं और नेपाली कांग्रेस उन्हें हर क़ीमत पर सत्ता से दूर रखने के लिए कटिबद्ध है, जबकि मधेशी पार्टियां अपनी स्वार्थसिद्धि में लगी हैं. राजनीति की इन कलाबाज़ियों के बीच आम जनता के लिए सोचने वाला कोई नहीं है. जनता त्राहिमाम कर रही है, विकास कार्य रुके पड़े हैं, देश के अधिकांश हिस्सों में क़ानून व्यवस्था नाम की कोई चीज नहीं रह गई है. जनता निराश है और यह निराशा राजशाही की वापसी की पृष्ठभूमि तैयार करती दिख रही है. आम जनता उन पुराने दिनों को याद करने लगी है, जब राजशाही के दौर में नेपाल को एक अमन पसंद राष्ट्र के रूप में गिना जाता था. वह उसी दौर में फिर से लौटने को इच्छुक दिखाई देने लगी है. तमाम राजनीतिक पार्टियों की सत्तालोलुपता और स्वार्थपरता को देखते हुए उसे यह एहसास होने लगा है कि राजशाही के हाथों में ही उसका भविष्य सुरक्षित रह सकता है.

e देश का पहला इंटरनेट टीवी

तीन महीने में रचा इतिहास

- हिन्दी की सबसे पॉपुलर वेबसाइट
- हर महीने 12,00,000 से ज़्यादा पाठक
- हर दिन 40,000 से ज़्यादा पाठक
- स्पेशल प्रोग्राम-भारत का राजनीतिक इतिहास
- समाचार-राजनीति, खेल, पर्यावरण, मनोरंजन
- संगीत और फ़िल्मों पर विशेष कार्यक्रम
- साई की महिमा

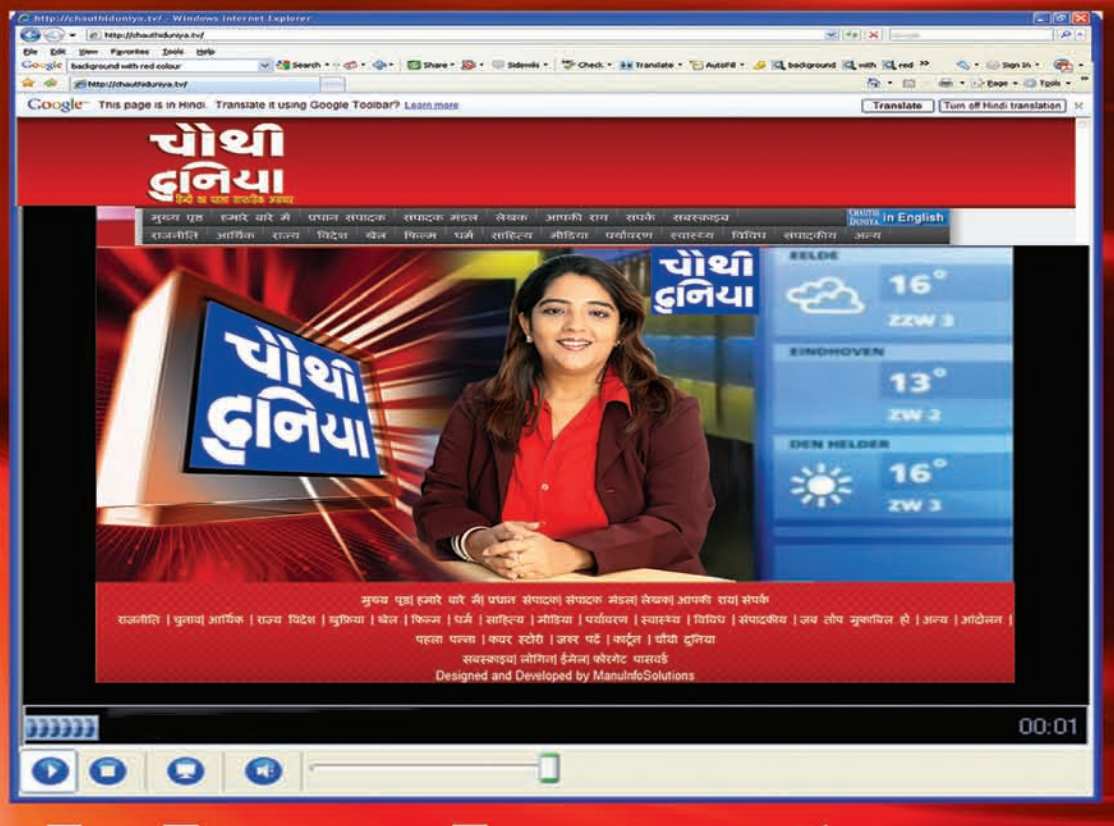

www.chauthiduniya.tv

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301

जब उन्हें विदित हो गया कि मैं अब शीघ्र इस नश्वर देह का त्याग करूंगा, तब उन्होंने श्री वझे को राम विजय प्रकरण सुनाने की आज्ञा दी.

समाधि मंदिर और पूर्व तैयारी

हिंदुओं में यह प्रथा है कि जब किसी मनुष्य का अंतकाल निकट आ जाता है तो उसे धार्मिक ग्रंथ आदि पढ़कर सुनाए जाते हैं. इसका मुख्य कारण केवल यही है कि इससे उसका मन सांसारिक झंझटों से मुक्त होकर आध्यात्मिक विषयों में लग जाए और वह प्राणी कर्मवश अगले जन्म में जिस योनि को धारण करे, उसमें उसे सद्गति प्राप्त हो. सर्वसाधारण को यह विदित ही है कि जब राजा परीक्षित को एक ब्रह्मर्षि पुत्र ने शाप दिया और एक सप्ताह के पश्चात ही उनका अंतकाल निकट आया तो महात्मा शुकदेव ने उन्हें उस सप्ताह में श्रीमदभागवत पुराण का पाठ सुनाया, जिससे उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हुई. यह प्रथा आज भी अपनाई जाती है. महानिर्वाण के समय गीता, भागवत और अन्य ग्रंथों का पाठ किया जाता है. बाबा तो स्वयं अवतार थे, इसलिए उन्हें बाहरी साधनों की आवश्यकता नहीं थी, परंतु केवल दूसरों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करने हेतु उन्होंने इस प्रथा की उपेक्षा नहीं की. जब उन्हें विदित हो गया कि मैं अब शीघ्र इस नश्वर देह का त्याग करूंगा, तब उन्होंने श्री वझे को राम विजय प्रकरण सुनाने की आज्ञा दी. श्री वझे ने एक सप्ताह प्रतिदिन पाठ सुनाया.

तत्पश्चात ही बाबा ने उन्हें आठों प्रहर पाठ करने की आज्ञा दी. श्री वझे ने उस अध्याय की द्वितीय आवृत्ति तीन दिन में पूर्ण कर दी और इस प्रकार 11 दिन बीत गए. फिर तीन दिन और उन्होंने पाठ किया. अब श्री वझे बिल्कुल थक गए, इसलिए उन्हें विश्राम करने की आज्ञा हुई. बाबा अब बिल्कुल शांत बैठ गए और आत्मस्थित होकर वह अंतिम क्षण की प्रतीक्षा करने लगे. दो-तीन दिन पूर्व ही प्रातःकाल से बाबा ने भिक्षाटन करना स्थगित कर दिया और वह मस्जिद में ही बैठे रहने लगे. वह अपने अंतिम क्षण के लिए पूर्ण सचेत थे, इसलिए वह अपने भक्तों को धैर्य तो बंधाते रहते, पर उन्होंने किसी से भी अपने महानिर्वाण का निश्चित समय प्रकट नहीं किया. इन दिनों काका साहेब दीक्षित और श्रीमान बूटी बाबा के साथ मस्जिद में नित्य ही भोज करते थे. महानिर्वाण के दिन (15 अक्टूबर को) आरती समाप्त होने के पश्चात बाबा ने उन लोगों को भी अपने निवास स्थान पर ही भोजन करके लौटने को कहा. फिर भी लक्ष्मीबाई शिंदे, भागो जी शिंदे, बया जी, लक्ष्मण बाला शिंपी और नाना साहेब निमोणकर वहीं रह गए. शामा नीचे मस्जिद की सीढ़ियों पर बैठे थे. लक्ष्मीबाई शिंदे को 9 रुपये देने के पश्चात बाबा ने कहा कि मुझे मस्जिद में अब अच्छा नहीं लगता है, इसलिए मुझे बूटी के पत्थरवाड़े में ले चलो, जहां मैं सुखपूर्वक रहूंगा. यही अंतिम शब्द उनके श्रीमुख से निकले. इसी समय बाबा बया जी के शरीर की ओर लटक गए और अंतिम श्वांस छोड़ दी. भागो जी ने देखा कि बाबा की श्वांस रुक गई है, तब उन्होंने नाना साहेब निमोणकर को पुकार कर यह बात कही. नाना साहेब ने कुछ जल लाकर बाबा के श्रीमुख में डाला, जो बाहर लुढ़क आया. तभी उन्होंने ज़ोर से आवाज़ लगाई, अरे देवा. तब बाबा ऐसे दिखाई पड़े, जैसे उन्होंने धीरे से नेत्र खोलकर धीमे स्वर में ओह कहा हो. परंतु अब स्पष्ट विदित हो गया कि उन्होंने सचमुच ही शरीर त्याग दिया है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

बाबा का शिरडी में प्रथमागमन

एक बार एक आश्चर्यजनक घटना घटी. एक भक्त पर भगवान खंडोबा का संचरण हुआ. लोगों ने शंका-समाधान की दृष्टि से खंडोबा से पूछा, हे देव, बतलाइए कि इस तरुण के माता-पिता कौन हैं और इसका आगमन कहां से हुआ है? इस पर भगवान खंडोबा ने एक कुदाली मंगवा कर निर्दिष्ट स्थान को खोदने के लिए कहा. जब वह स्थान पूरी तरह खोद दिया गया तो .....

साई बाबा के माता-पिता कौन थे? उनका जन्म कब और कहां हुआ था? इस बारे में किसी को भी ठीक से कुछ ज्ञात नहीं था. इस संदर्भ में काफी खोजबीन भी की गई और स्वयं साई से भी पूछा गया, लेकिन कोई भी संतोषजनक उत्तर या कोई सूत्र हाथ नहीं लग सका. वास्तव में साई बाबा का प्राकट्य हुआ था, जन्म नहीं. जन्म तो योनिज का होता है, जबकि अयोनिज का प्राकट्य होता है. साई बाबा का भी प्राकट्य हुआ था, ठीक वैसे ही, जैसे नामदेव एवं कबीरदास का और वह भी बालरूप में. नामदेव एवं कबीर जहां बालरूप में मिले थे, वहीं साई बाबा सोलह वर्ष की तरुणावस्था में शिरडी में नीम के पेड़ के नीचे भक्तों के कल्याण के लिए प्रकट हुए थे.

साई बाबा संपूर्ण ब्रह्म ज्ञानी थे. किसी भी भोग-विलास और सांसारिक पदार्थों की उन्हें स्वप्न में भी कोई लालसा नहीं थी. माया को वह ठुकरा चुके थे तो मुक्ति उनके श्री-चरणों में लोटती थी. शिरडी गांव की एक वृद्धा स्त्री (नाना चोपदार की मां) ने साई बाबा के बारे में वर्णन करते हुए बताया कि एक तरुण, स्वस्थ, फुर्तीला एवं अतिशय सुंदर बालक नीम के पेड़ के नीचे उन्हें समाधिस्थ दिखाई दिया. उसे सर्दी-गर्मी और बरसात की जरा भी परवाह नहीं थी. इतनी छोटी आयु में एक तरुण को तपस्या करते देख लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ. वह तरुण दिन में किसी से भी नहीं मिलता था. रात्रि में भी वह निर्भीकता से भ्रमण करता था. लोग उस तरुण के बारे में आश्चर्यचकित होकर इधर-उधर लोगों से पूछते फिरते थे कि उसका आगमन कहां से हुआ है? उस तरुण का शारीरिक सौंदर्य ऐसा था कि जो कोई भी उसे एक बार देख लेता था, वह सम्मोहित सा हो जाता था.वह तरुण हमेशा नीम के पेड़ के नीचे बैठा रहता था. उसका आचरण किसी महात्मा से कम नहीं था. वह त्याग एवं वैराग्य की प्रतिमा था. एक बार एक आश्चर्यजनक घटना घटी. एक भक्त पर भगवान खंडोबा का संचरण हुआ. लोगों ने शंका-समाधान की दृष्टि से खंडोबा से पूछा, हे देव, बतलाइए कि इस तरुण के माता-पिता कौन हैं और इसका आगमन कहां से हुआ है? इस पर भगवान खंडोबा ने एक कुदाली मंगवा कर निर्दिष्ट स्थान को खोदने के लिए कहा. जब वह स्थान पूरी तरह खोद दिया गया तो वहां पत्थर के नीचे कुछ ईंटें मिलीं. पत्थर एवं ईंटों को हटाया गया तो वहां एक दरवाजा दिखाई दिया, जहां चार दीपक जल रहे थे. उस दरवाजे का रास्ता एक गुफा में जाता था, जहां गाय के मुख के आकार की इमारत, लकड़ी के तख्ते, मालाएं आदि दिखाई दीं. भगवान खंडोबा बोले कि इस तरुण ने इस स्थान पर बारह वर्ष तक तप किया है. तब लोग उस तरुण से ही प्रश्न करने लगे, लेकिन उस तरुण ने बात को यह कहकर टाल दिया कि यह मेरे गुरुदेव की पवित्र भूमि है, जो मेरे लिए पूजनीय है. तब फिर लोगों ने उस दरवाजे को पहले की तरह बंद कर दिया. जिस तरह अश्वत्थ (पीपल) और औदुंबर (गूलर) के पेड़ों को पवित्र माना जाता है, उसी तरह नीम के पेड़ को भी श्री साई बाबा ने उतना ही पवित्र माना और उससे प्रेम किया. जिस नीम के पेड़ के नीचे श्री साई बाबा तप किया करते थे, उस स्थान एवं पेड़ को न केवल म्हालसापति, बल्कि अन्य भक्तजन भी गुरु का समाधि स्थल समझ कर सदैव नमन किया करते थे.

श्री सद्गुरु साई बाबा के ग्यारह वचन

1. जो शिरडी आएगा, आपद दूर भगाएगा.
2. चढ़े समाधि की सीढ़ी पर, पैर तले दुख की पीढ़ी पर.
3. त्याग शरीर चला जाऊंगा, भक्त हेतु दौड़ा आऊंगा.
4. मन में रखना दृढ़ विश्वास, करे समाधि पूरी आस.
5. मुझे सदा जीवित ही जानो, अनुभव करो, सत्य पहचानो.
6. मेरी शरण आ खाली जाए, हो कोई तो मुझे बताए.
7. जैसा भाव रहा जिस मन का, वैसा रूप हुआ मेरे मन का.
8. भार तुम्हारा मुझ पर होगा, वचन न मेरा झूठा होगा.
9. आ सहायता लो भरपूर, जो मांगा वह नहीं है दूर.
10. मुझ में लीन वचन मन काया, उसका ऋण न कभी चुकाया.
11. धन्य धन्य व भक्त अनन्य, मेरी शरण तज जिसे न अन्य.

उत्साह एवं लगन से लबरेज जयदेव बघेल ने इस कला को आजीविका बनाने और इसे दिशा देने के लिए जो भी प्रयोग किए, वे सफल रहे. उनकी कृतियां लोगों का ध्यान खींचने लगीं.

बाज़ार को भुनाने की चाहत

अनंत विजय

पिछले लगभग एक दशक के प्रकाशनों पर नज़र डालें तो हम पाते हैं कि कई वरिष्ठ पत्रकारों, संपादकों की मीडिया और उससे जुड़े विषयों पर किताबें प्रकाशित हुई हैं. इन पुस्तकों में जो समानता दिखाई देती है, वह यह है कि पत्रकारों, संपादकों ने पूर्व में लिखे लेखों को संयोजित कर एक थीम, आकर्षक शीर्षक और चर्चित समकालीन वरिष्ठ पत्रकार की गंभीर भूमिका के साथ पुस्तकाकार में छपवाया है. मेरे जानते इसकी शुरुआत उदयन शर्मा के लेखों के संग्रह के प्रकाशित होने के साथ हुई थी. उसके बाद आलोक मेहता और मधुसूदन आनंद के प्रयासों से राजेंद्र माथुर के लेखों का संग्रह सपनों में बनता देश छपा था. उक्त दोनों प्रयास अपने वरिष्ठों के निधन के बाद उनके लेखन से अगली पीढ़ी को परिचित कराने की एक ईमानदार कोशिश थी, लेकिन बाद में कई वरिष्ठ पत्रकारों के लेखों के संग्रह प्रकाशित होने शुरू हुए. दो हज़ार तीन में प्रभाष जोशी के लेखों का संग्रह हिंदू होने का धर्म छपा, जिसमें उन्होंने लगभग पचास पन्नों की लंबी भूमिका लिखी. लगभग उसी वक़्त अरविंद मोहन की किताब मीडिया की ख़बर प्रकाशित हुई थी. दो हज़ार आठ में एक बार फिर प्रभाष जोशी के अख़बारी लेखों के चार संकलन एक साथ प्रकाशित हुए. सिर्फ़ प्रभाष जोशी या अरविंद मोहन ही इस सूची में नहीं हैं. कई वरिष्ठ लेखकों ने इस तरह की किताबें छपवाई हैं. जब उक्त किताबें छपकर बाज़ार में आ रही थीं तो वह दौर मीडिया के विस्तार का दौर था और अख़बारों एवं न्यूज़ चैनलों के विस्तार की वजह से पत्रकारिता पढ़ाने के संस्थान धड़ाधड़ खुल रहे थे, जिसमें पढ़ने वाले छात्रों की संख्या बहुत ज़्यादा थी. यह महज़ एक संयोग था या फिर बाज़ार को ध्यान में रखकर ऐसा हो रहा था, इसका निर्णय होना अभी शेष है, लेकिन जिस तरह से पूर्व प्रकाशित अख़बारी लेखों का संकलन पत्रकारिता को ध्यान में रखकर किया जा रहा है, उससे यह तो साफ प्रतीत होता है कि यह बाज़ार को भुनाने या फिर बाज़ार से अपना हिस्सा लेने की कोशिश है.

राजदीप के मुताबिक़, प्रभात अलग-अलग विषयों पर लिखते हैं. चाहे वह धारा 377 हो या फिर एमएफ हुसैन, लेकिन इन सबके बीच प्रभात के लेखन में एक बात समान है, वह यह कि भारत के संविधान में मौजूद उदारवादी मूल्यों में उनकी अटल प्रतिबद्धता. राजदीप के अलावा प्रभात ने अपने पत्रकार बनने और टीवी में आने के बाद फिर से लिखना शुरू करने की दिलचस्प दास्तां लिखी है.

अब इस कड़ी में प्रिंट और टीवी में काम कर चुके पत्रकार प्रभात शुंगलू की किताब यहां मुखौटे बिकते हैं प्रकाशित हुई है. इस किताब का परिचय राजदीप सरदेसाई ने लिखा है. राजदीप के मुताबिक़, प्रभात अलग-अलग विषयों पर लिखते हैं. चाहे वह धारा 377 हो या फिर एमएफ हुसैन, लेकिन इन सबके बीच प्रभात के लेखन में एक बात समान है, वह यह कि भारत के संविधान में मौजूद उदारवादी मूल्यों में उनकी अटल प्रतिबद्धता. राजदीप के अलावा प्रभात ने अपने पत्रकार बनने और टीवी में आने के बाद फिर से लिखना शुरू करने की दिलचस्प दास्तां लिखी है. प्रभात के लेखन में अंग्रेजी के शब्द बहुतायत में आते हैं और लेखक के मुताबिक़ वह आम बोलचाल की भाषा है. इसके लिए उनके अपने तर्क हैं और तथ्य भी. पर मेरा मानना है कि दूसरी भाषा के शब्दों से परहेज न करें, लेकिन अगर आप हिंदी में लिख रहे हैं और वहां दूसरी भाषा से बेहतर और आसान शब्द मौजूद हैं तो फिर आम बोलचाल के नाम पर दुराग्रह उचित नहीं है. लेकिन प्रभात के लेखों में यह चीज एक जिद की तरह आती है, गोया वह कोई नया प्रयोग कर रहे हैं या कोई नई भाषा गढ़ रहे हैं.

इस किताब में तीन अलग-अलग खंड हैं–सियासत, शख्सियत और समाज. इन तीन खानों में प्रभात ने अपने लेखों को बांटा है. प्रभात की एक खासियत है कि वह गंभीर विषयों पर भी व्यंग्यात्मक शैली में अपनी कलम चलाते हैं. चाहे वह कौन

बनेगा वीक प्रधानमंत्री हो या फिर यहां मुखौटे बिकते हैं या फिर पांडु ब्रदर्स एंड संस हो या फिर हुसैन, तुम माफी मत मांगना. हर जगह एक तंज नज़र आता है, जिसे प्रभात की शैली के तौर पर रेखांकित किया जा सकता है. कौन बनेगा वीक प्रधानमंत्री में आडवाणी पर तंज कसते हुए प्रभात कहते हैं, एक पल के लिए अगर मान भी लें कि आप प्रधानमंत्री बन भी जाते हैं तो क्या आज शपथ लेकर कह पाएंगे कि सत्ता का कंट्रोल और रिमोट कंट्रोल दोनों आपके हाथ में होगा? राजनाथ, जेटली नरेंद्र मोदी और वरुण गांधी के हाथ में नहीं, मोहन भागवत के हाथ में नहीं, प्रमोद मुथल्लिक के हाथ में नहीं. वहीं पांडु ब्रदर्स एंड संस में प्रभात गठजोड़ की राजनीति पर व्यंग्यात्मक शैली में लिखते हैं, अजीत सिंह ने फिर बीजेपी का दामन थामा है. कैलकुलेशन किया, 4 सीटें भी जीतीं, दो मिनिस्टर बर्थ पक्की. एक अपनी और एक अनु की. गडकरी के भाजपा अध्यक्ष का पद संभालने के बाद अपने लेख कुहासे में नेतृत्व में प्रभात लिखते हैं, पार्टी का राष्ट्रीय अध्यक्ष बनने के बाद भी गडकरी का नागपुर प्रेम कुलांचे मारता नज़र आया. आगे वह लिखते हैं कि गडकरी पांव छूने को चाटुकारिता मानते हैं, लेकिन अध्यक्ष बनने के बाद राजनाथ, आडवाणी एवं सुषमा के पांव छूकर आशीर्वाद लिया, वह शीर्ष नेताओं के प्रति उनकी श्रद्धा थी. अब गडकरी हनुमान होते तो अपना सीना चीरकर दिखला देते.

प्रभात शुंगलू की यह किताब चूंकि अख़बारी लेखों का संग्रह है, इसलिए कई बातें संपूर्णता में नहीं आ पाईं. कई लेख विस्तार की मांग करते हैं जैसे करगिल से जुड़े प्रभात के लेखों में एक अलग किताब की गुंजाइश नज़र आती है. प्रभात शुंगलू करगिल युद्ध को कवर करने वाले गिने-चुने पत्रकारों में से एक है. उन्हें उस दौर के अपने अनुभवों पर गंभीरतापूर्वक विस्तार से लिखना चाहिए, ताकि एक स्थायी महत्व की किताब सामने आए. जल्दबाज़ी में करगिल पर अख़बार के स्थान के हिसाब से लिखकर और फिर उसे अपनी किताब में छपवा कर प्रभात ने अपरिपक्वता का परिचय दिया है. यहां मुखौटे बिकते हैं प्रभात शुंगलू की पहली किताब है और पहली बार किताब छपने के उत्साह में कई हल्की चीजें भी चली गई हैं, जिनका कोई स्थायी महत्व नहीं है. यानी मुंबई की अस्मिता से खिलवाड़ जैसे लेखों का स्थायी महत्व नहीं हो सकता है. इस किताब का सिर्फ़ इतना महत्व है कि दो हज़ार नौ की शुरुआत से लेकर लगभग सवा साल की महत्वपूर्ण घटनाएं और उन पर लेखक का नज़रिया आपको एक जगह मिल जाएगा. प्रभात की किताब इस बात का संकेत ज़रूर देती है कि अगर वह गंभीरता से विषय विशेष और उसके हर पहलू पर विस्तार से लिखें तो गंभीर किताब बन सकती है.

(लेखक आईबीएन-7 से जुड़े हैं)

anant.ibn@gmail.com

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

प्रदीप सौरभ

धर्मशीला पेट से हो गई थी. रमेश ने भरी पंचायत में उसे पहचानने से इंकार कर दिया. पंचायत भी दबंगों की थी. धर्मशीला एक दलित परिवार से थी. उसकी किसी ने न सुनी. पंचायत में तो उसका परिवार न्याय मांगने गया था, लेकिन उल्टे उसे ही बेशर्म, रंडी, कलंकिनी और न जाने क्या-क्या कहा गया. इसके बाद उसकी शादी न हो सकी. वह गांव में ही रहती. बाबू साहब लोग ज़बरदस्ती कभी-कभार उसे खेत में पकड़ कर अपनी प्यास बुझा लेते. वह प्रतिरोध न कर पाती. विरोध कर वह अपनी इज़्ज़त पंचायत में लुटवा चुकी थी. उसने वेश्यावृत्ति का धंधा नहीं अपनाया, लेकिन वह बेबस थी. मर्दानगी दिखाने के बाद बाबू साहब लोग कुछ पैसे भी देते. मजबूर धर्मशीला उसे मजबूरी में रख लेती. अपने बुरे दिनों के लिए.

मुन्नी को हमेशा धर्मशीला पर तरस आता था. वह जब भी गांव में जाती तो उससे ज़रूर मिलती. उसका सुख-दुःख पूछती. वह जानती थी कि उसके चाचा के लड़के ने ही उसे गर्भवती किया था. उसका कोई दोष नहीं था. लेकिन वह यह बात किसी को बता नहीं सकी. उसे अब लगता था कि अगर रमेश मिल जाए तो वह जबरिया उसकी शादी धर्मशीला से करा दे, लेकिन रमेश उस घटना के बाद कलकत्ता चला गया था. गांव से उसका नाता टूट सा गया था. होली-दीवाली में भी नहीं आता था. कलकत्ता में वह कारोबार करने लगा था. उसने एक बांग्लादेशी लड़की से शादी भी कर ली थी, लेकिन उसकी मुंह मारने की आदत नहीं गई थी. पैसा ज़्यादा कमाने पर वह दारू पीकर सोनागाछी में रंडीबाज़ी करने पहुंच जाता.

बस बक्सर पहुंच चुकी थी. गोपीनाथपुर गांव के लिए वह जीप पर बैठ गई. मुन्नी के पिता

वासुदेव कोई बहुत पैसे वाले नहीं थे. पहलवानी में अच्छा नाम था, इसलिए लोग उन्हें जानते थे. उसके पिता पांच भाई थे, इसलिए लोग उन्हें पण्डवा बोलते थे. वासुदेव को बाबू साहब लोग रंगदारी के लिए गाहे-बगाहे बुला लिया करते थे. वह इसके लिए अच्छे-खासे पैसे लेते थे. गांव की सड़क अच्छी नहीं थी, इसलिए जीप हिचकोले मारते चल रही थी. बार-बार के हिचकोले मुन्नी की एकाग्रता को तोड़ रहे थे. गांव नज़दीक आ रहा था. उसे अपना स्कूल दिखा. पढ़ाई के महत्व को वह समझ चुकी थी, इसलिए स्कूल को देखकर वह भावुक हो उठी. उसे स्कूल के वे दिन याद आ गए. वह ज़्यादा दिन स्कूल नहीं गई. स्कूल में मास्टरनी पढ़ाने के बजाय उससे कुएं से पानी भरवाती. थोड़े दिन यह सब चलता रहा. एक दिन उसने अपने पिता को सारी बात बताई और उसी दिन स्कूल से उसका रिश्ता टूट गया. वह ककहरा तक न सीख पाई. इसके बाद तो दूसरों के खेत से गन्ना तोड़ भाग जाना, बूढ़ों की नज़र बचाकर आम तोड़ लेना, चारा मशीन चलाना, घर में चक्की पीसना और खाना बनाना ही उसके हिस्से रह गया था.

अब जीप से मुन्नी के उतरने की बारी थी. वह जीप से उतरी ही थी कि उसका बड़ा भाई सामने दिख गया. मुन्नी के हाथ से अटैची लेकर वह घर की ओर चलने लगा. हालचाल पूछने के बाद अचानक आने की वजह भी पूछी. मुन्नी ने सारी बात जल्दी से बता दी, बैंक से पैसे निकालने हैं. साहिबाबाद में ज़मीन ख़रीदनी है. तीन दिन में बयाना नहीं दिया तो ज़मीन हाथ से निकल जाएगी. घर पहुंच कर उसने मां के पैर छुए. मां ने बहुत दिन बाद बेटी को देखा था, अरे बिंदू तू तो बहुत दुबली हो गई हो. खाना-वाना नहीं मिलता है क्या? नाही माई, वैसी ही तो हूं, मुन्नी उर्फ बिंदू ने हंसते हुए मां को गले लगा लिया.

साहिबाबाद की मुन्नी मोबाइल बक्सर के लिए बिंदू यादव थी. मुन्नी के नाम से उसे कोई नहीं जानता था यहां. वह कभी-कभी कहती थी कि साहिबाबाद में मर्डर कर मैं बक्सर भाग जाऊं तो कोई मुझे वहां नहीं खोज सकता है.

अगले अंक में जारी...

कला का राजनीति से कोई नाता नहीं

यदि आज के हालात में बस्तर जाने के नाम पर कुछ लोगों को सिहरन होने लगे तो ग़लत नहीं होगा, किंतु व्यापक संदर्भ में ऐसा नहीं है. नक्सली हिंसा के चलते इस क्षेत्र के बारे में दुनिया में एक दूसरी ही छवि बनी है, लेकिन बस्तर की अपनी ही दुनिया है. ऐसी दुनिया, जहां प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने वाले लोग रहते हैं, जहां आज भी छल-प्रपंच एवं आडंबर का नामोनिशान नहीं है. अपनापन है, सादगी है. यहां की अपनी अनूठी संस्कृति और परंपराएं हैं, लेकिन सुविधाभोगी सभ्य समाज की नज़र में यह क्षेत्र जंगली और पिछड़ा है. यहां की निराली परंपराओं से ही अभिभूत होकर ब्रिटेन से आए मिशनरी वेरियर एल्विन अपना कार्य छोड़कर यहां पहले सेवा करने लगे और फिर अध्ययन में जुट गए. यहीं इन्होंने विवाह भी किया. बस्तर के आदिवासी समाज की परंपराओं में ढोकरा शिल्प निर्माण भी एक है. वैसे तो यहां पर काष्ठ, प्रस्तर, लौह एवं टेराकोटा शिल्प भी है, किंतु यहां के धातु शिल्प ढोकरा का कोई जवाब नहीं है. आज भी यह अपने आदिरूप में देखने को मिलता है. आदि है तो अनूठा है और सुंदर भी. लोकतत्वों से भरपूर इस शिल्प की बाज़ार में मांग है. जिस तरह तीजनबाई पंडवानी शैली को छत्तीसगढ़ की धरती से देश-दुनिया में ले गईं, ठीक वही श्रेय जयदेव बघेल को जाता है, जिन्होंने प्रयोगधर्मिता का समावेश कर बस्तर के धातु शिल्प को देश-दुनिया तक पहुंचाया. मान-सम्मान मिलने के बाद ज़्यादातर लोग अपनी माटी को छोड़ चमक-दमक भरी ज़िंदगी अपना लेते हैं, किंतु जयदेव ने ऐसा नहीं किया. वह गांव जहां उन्होंने इस कला का ककहरा पढ़ा, आज भी उनकी कर्मस्थली है. यह गांव है राष्ट्रीय राजमार्ग-43 पर रायपुर से 230 किलोमीटर दूर बस्तर ज़िले में कोंडागांव से सटा भेवलवांपदरपारा.

गांव की सीमा में प्रवेश करते ही घर-घर में धातु शिल्प के दर्शन होते हैं. मुख्य मार्ग से जैसे ही गांव की धूल भरी सड़क पर आप चंद क़दम चलते हैं तो एक बड़ी, किंतु अलग सी हवेली दिखती है, जिसे देखकर कोई भी सहजता से कह सकता है कि यह किसी कलाकार का ही घर हो सकता है. यह पूछने के लिए कि क्या जयदेव बघेल यहीं रहते हैं, मैं दरवाज़ा खटखटा देता हूं. प्रवेश का संकेत मिलता है. नज़र दौड़ाने पर एक साथ कई लोग काम में मशगूल दिखते हैं. कोने पर बने टिन शेड में गुंथी हुई मिट्टी को कुछ महिला कलाकार हाथों से आकार दे रही हैं. कुछ लोग मिट्टी के ढांचे पर काला धागा सा लपेट रहे हैं. धौंकनी से भट्टी को झोंका जा रहा है और समीप खड़ा एक साठ वर्षीय आदिवासी बुज़ुर्ग निर्देश दे रहा है कि ऐसे नहीं, ऐसे करो. सुप्रसिद्ध बस्तरिया डोकरा कला के शिल्पी के रूप में जयदेव बघेल का नाम छत्तीसगढ़ में आदर के साथ लिया जाता है. इनके पिता चालीस के दशक में अबूझमाड़ से आकर यहां बसे. वह यहां पर खेती करते

जयदेव बघेल

और जो खाली समय मिलता, उसे पारंपरिक हस्तशिल्प के निर्माण में लगाते. यहीं पैदा हुए बालक जयदेव ने पिता से 16 साल की उम्र तक आते-आते आदिवासी डोकरा कला के सारे गुर सीख लिए. डोकरा कला की सारी बारीकियां समझ में आने लगीं. ज़िंदगी के शुरुआती दिनों में जयदेव ने नौकरी भी की, किंतु वह रास न आई, क्योंकि मन तो कला में बसा था.

घर लौटकर इस कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय किया. पूंजी चाहिए थी, सो ऋण लेने के इरादे से बैंक गए, लेकिन बैंक ने पांच सौ रुपये से अधिक ऋण देने में असमर्थता जता दी. इस पर जयदेव ने घर के गहने बेच डाले और बड़े स्तर पर अपना काम शुरू किया. उत्साह एवं लगन से लबरेज जयदेव बघेल ने इस कला को आजीविका बनाने और इसे दिशा देने के लिए जो भी प्रयोग किए, वे सफल रहे. उनकी कृतियां लोगों का ध्यान खींचने लगीं. इसी बीच मध्य प्रदेश सरकार की नज़र उनके काम पर गई और उन्हें सरकारी मेलों, शिल्प प्रदर्शनियों में बुलाया जाने लगा. 1972 से 2008 के बीच उन्होंने दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, बेंगलुरू, भोपाल एवं पुणे आदि में लगभग दो दर्जन से अधिक प्रदर्शनियों में निजी एवं सामूहिक रूप से भाग लिया. शिल्पगुरु बघेल के साथ यह कला पहले प्रांत, फिर देश में पहुंच गई. अब विदेशी मंचों के द्वार भी उनके लिए खुलने लगे. पहले अमेरिका, फिर रूस, फ्रांस एवं ब्रिटेन में हुए भारत महोत्सवों में बघेल को बुलाया गया. बाद में उन्होंने स्विट्जरलैंड, आस्ट्रेलिया, इटली, जर्मनी, सिंगापुर, थाईलैंड एवं जापान आदि देशों की अनेक यात्राएं कीं. अमेरिका प्रवास का अनुभव बांटते हुए बघेल कहते हैं कि वह जब शिल्प बनाते थे तो घंटों तक अमेरिकी दर्शक उसे निहारते रहते थे और जब कृति तैयार हो जाती तो मुंहमांगी क़ीमत पर ख़रीद लेते.

आदिवासी क्षेत्रों में गढ़वा या ढोकरा शिल्प सदियों पुराना है, किंतु बस्तर के इस शिल्प की अपनी पहचान है. इसके लिए कच्चा माल यानी मिट्टी, मोम, पीतल एवं तांबा आदि सब जगह मिल जाता है. ढोकरा कला 4000 साल पुरानी है. यहां बनने वाली कलाकृतियां बहुत कुछ सिंधु घाटी एवं हड़प्पा से मिली वस्तुओं से मेल खाती हैं. 60 साल की आयु में भी बघेल की सुबह इसी शिल्प निर्माण से शुरू होती है. वह नए-नए डिज़ाइनों, कच्चे माल में दूसरी धातुओं के सम्मिश्रण, विभिन्न रंगों के प्रयोग और अपनी कल्पनाशीलता की वजह से परंपरागत शिल्प में प्रयोगार्थी के रूप में जाने जाते हैं. उनके यही प्रयोग इस कला को स्थापित करने में महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं. इससे इसमें निखार आया और सामग्री बाज़ार में प्रतिस्पर्धा करने लायक़ बनी. जयदेव द्वारा निर्मित सामग्री देश के कई संग्रहालयों एवं कला वीथिकाओं की शोभा बढ़ा रही हैं. सैकड़ों शिल्पियों को उन्होंने इस कला के गुर सिखाए, जो इसे अपनी आजीविका बना चुके हैं. बघेल देश-प्रदेश के कई पुरस्कारों से सम्मानित हो चुके हैं. वह मध्य प्रदेश सरकार के अलावा मास्टर क्राफ्ट्समैन, गोल्ड लैक पुरस्कार, बाबा साहेब अंबेडकर राष्ट्रीय सम्मान, कमला देवी चट्टोपाध्याय राष्ट्रीय शिल्प पुरस्कार एवं शिल्पगुरु आदि सम्मानों से नवाजे जा चुके हैं. 2003 में रविशंकर विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. लिट. की मानद उपाधि प्रदान की. बघेल पर कई किताबें भी लिखी जा चुकी हैं. क्या कभी राजनीति में जाने की सोची? पूछने पर वह बताते हैं, नहीं, कला का राजनीति से क्या नाता? इससे कलाकार की एकाग्रता टूट जाती है. हां, इंदिरा जी मुझे राज्यसभा में नामित सदस्य बनाने की इच्छुक थीं, किंतु यह कला हमेशा जिंदा रहे, इसलिए हमने उस प्रस्ताव में रुचि नहीं ली.

भेवलवांपदरपारा आज धातु शिल्प एक गढ़ है तो कोंडागांव तहसील मेंलौह, प्रस्तर एवं टेराकोटा का काम भी हो रहा है, जिससे 3-4 हज़ार लोगों को प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से रोज़गार मिला है. अंत में वह अपना संग्रह दिखाते हैं. वह प्रत्येक कृति की थीम के बारे में थोड़ा-थोड़ा बताते हैं. भेवलवांपदरपारा में अब सांझ होने को है. झोपड़ियों एवं शेडों से अब भी धुआं उठ रहा है. कई जगह मोम लगे मिट्टी के सांचे पक चुके हैं. कुछ जगह कलाकार क्रूसीबेल में पिघली धातु को पक चुके सांचों में डाल रहे हैं. बड़ी सतर्कता से काम हो रहा है. यह एक ऐसा क्षण होता है, जब थोड़ी भी चूक इन कलाकारों की मेहनत को बर्बाद कर सकती है. बस्तर के इन कलाकारों के हुनर की बात आज कहां हो रही है भला!

एल मोहन कोठियाल
feedback@chauthiduniya.com

श्री डी इनेबल्ड हार्डवेयर उत्पादों एवं सॉफ्टवेयर कंटेंट की मदद से सोनी ने भारत में 3-डी संस्कृति स्थापित कर उसे बढ़ावा देने की योजना बनाई है.

कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर

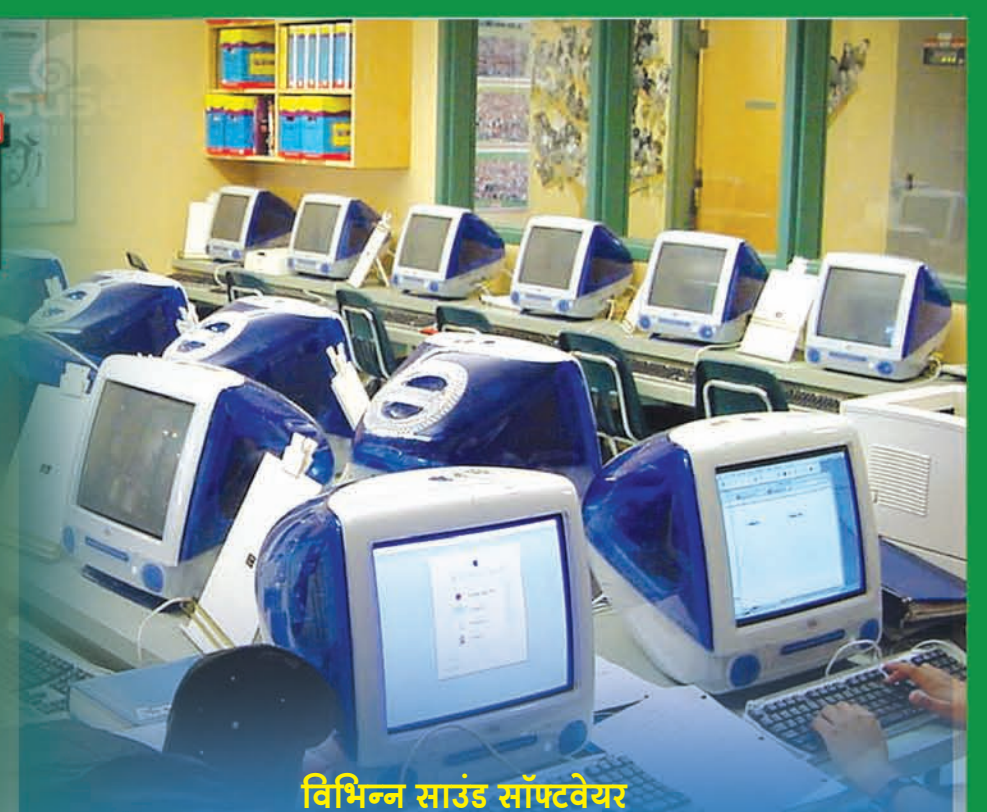

रीतिका सोनाली

कंप्यूटर की दुनिया ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर के मामलों में दो भागों में बंट चुकी है यानी ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम और पेड ऑपरेटिंग सिस्टम. कंप्यूटर सिस्टम शुरू करने के लिए उसमें डाले जाने वाले ऑपरेटिंग सिस्टम एवं सॉफ्टवेयर ओपन सोर्स और पेड दोनों होते हैं. ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर पूरी तरह से मुफ्त उपलब्ध हैं, जबकि पेड सॉफ्टवेयर के लिए ग्राहकों को मोटी क़ीमत अदा करनी पड़ती है. बिजनेस ऑफ सॉफ्टवेयर एसोसिएशन के अनुसार, 22 प्रतिशत यूजर ओपन सोर्स इस्तेमाल करते हैं, बाक़ी 33 प्रतिशत यूजर पाइरेटेड सॉफ्टवेयर इस्तेमाल करते हैं. कंप्यूटर सिस्टम का ईज़ाद करने वाला देश अमेरिका ख़ुद को ओपन सोर्स उपभोक्ता साबित करने की ओर क़दम बढ़ा चुका है. अमेरिकी सरकार पूरी तरह ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर इस्तेमाल करके अरबों डॉलर बचा रही है. अमेरिका का अनुसरण करते हुए भारत और दूसरे देशों को भी इस दिशा में क़दम उठाने की ज़रूरत है. हमारे देश की सरकार और जनता दोनों ही पेड सॉफ्टवेयर माइक्रोसॉफ्ट का इस्तेमाल करते हैं. इससे अरबों रुपये माइक्रोसॉफ्ट और आईबीएम जैसी कंपनियों के खाते में चले जाते हैं. हम अपना यह पैसा आसानी से दूसरे मुल्क में जाने से बचा सकते हैं, ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम का इस्तेमाल करके.

कंप्यूटर सिस्टम को एसेंबल करने में हार्डवेयर के बाद सॉफ्टवेयर की बारी आती है और उसमें भी सबसे पहले ऑपरेटिंग सिस्टम. आजकल बाज़ार में दो तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम उपलब्ध हैं, ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम और माइक्रोसॉफ्ट का ऑपरेटिंग सिस्टम. ओपन सोर्स का मतलब है, जिस सॉफ्टवेयर का कोड इंटरनेट पर फ्री उपलब्ध है और जिसे कोई भी डाउनलोड करके उसमें थोड़ी छेड़छाड़ करके अपना सॉफ्टवेयर बना सकता है. ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम निःशुल्क उपलब्ध है, जिसे इंटरनेट से डाउनलोड करके या बाज़ार में सॉफ्टवेयर वेंडर से लेकर अपने सिस्टम में इस्तेमाल किया जा सकता है. यह ऑपरेटिंग सिस्टम ग्राफिक्स, स्पीड में माइक्रोसॉफ्ट के विंडोज के मुक़ाबले काफ़ी एडवांस होता है. ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम के सॉफ्टवेयर भी आसानी से बाज़ार में या इंटरनेट पर मिल जाते हैं. दूसरी ओर माइक्रोसॉफ्ट का पेड यानी स:शुल्क ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर भी है, जिसे हम विंडोज के नाम से जानते हैं. इन दिनों सबसे प्रचलित विंडोज एक्सपी है, लेकिन अब इसे ख़रीदने की सलाह नहीं दी जाती, क्योंकि कंपनी ने इसका प्रोडक्शन पिछले साल जून में बंद कर दिया है. इसकी जगह पर विंडोज 7 लेना फ़ायदेमंद है. यह बहुत तेज़ी से लोकप्रिय हो रहा है. विंडोज के लिए सॉफ्टवेयर बहुत आसानी से सॉफ्टवेयर वेंडर या इंटरनेट से मिल जाते हैं और इंस्टॉल भी हो जाते हैं. हालांकि ये पेड हैं और इन्हें ख़रीदने के लिए काफ़ी पैसा लगता है और उसके बावजूद मिलने वाले सॉफ्टवेयर एवं ऑपरेटिंग सिस्टम पाइरेटेड ही मिल पाते हैं. इसलिए बेहतर है कि ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम का ही इस्तेमाल किया जाए. ओपन सोर्स का ईज़ाद भी माइक्रोसॉफ्ट की तरह ही बहुत पुरातन वक़्त में हुआ था. साठ के दशक में अमेरिका के रिचर्ड स्टॉलमैन नामक एक कंप्यूटर प्रोग्रामर ने एमआईटी ए एल लैब्स की नौकरी छोड़कर जीएनयू नाम से अपना ऑर्गनाइजेशन बनाया. इसमें वह ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम और सॉफ्टवेयर बनाने की कोशिश करने लगा, जो लोगों को मुफ्त उपलब्ध हो सकें. उसी समय पश्चिमी अमेरिका के सीएसआरजी कंप्यूटर साइंस रिसर्च ग्रुप ने भी ओपन सोर्स सिस्टम बनाने के लिए काम करना शुरू किया. इस कंपनी ने 1980 के दशक में यूनिक्स (unix) ऑपरेटिंग सिस्टम बनाया, जो बीएसडी लाइसेंस के अंतर्गत था और लोगों को मुफ्त उपलब्ध था. इसके सोर्स कोड में संशोधन करके इससे नया ऑपरेटिंग सिस्टम बनाया जा सकता था और वितरित भी किया जा सकता था. ग्राफिक्स आने के बाद ऑपरेटिंग सिस्टम यूजर फ्रेंडली हो गया. यूनिक्स भी ग्राफिकल हो गया, जो लाइनक्स (linux) हो गया. चूंकि यह मुफ्त उपलब्ध था, इसलिए बहुत सारे संगठनों ने इसे संशोधित कर अपने ढंग से बाज़ार में उतारा. इस कारण लाइनक्स के बहुत सारे वर्जन हैं, जैसे सूसे 'suse', फेडोरा 'fedora', यूबंटु 'ubantu', रेडहैट 'redhat', सेंट ओएस 'centos' इत्यादि.

ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम से ज़्यादा फ़ायदेमंद है. दूसरे ऑपरेटिंग सिस्टम के मुक़ाबले ओपन सोर्स ऑपरेटिंग सिस्टम फास्ट काम करते हैं और हर तरह के एप्लीकेशन के लिए काफी एडवांस होते हैं. इस ऑपरेटिंग सिस्टम के सॉफ्टवेयर साउंड एडिटिंग, ग्राफिक्स, वीडियो एडिटिंग में थ्री डी ग्राफिक्स एवं टू डी ग्राफिक्स का कोई मुक़ाबला नहीं है. यह काफ़ी आकर्षक होते हैं और इस्तेमाल करने में बहुत आसान भी. इसके सॉफ्टवेयर की स्पीड, साउंड और ग्राफिक्स उत्तम होने की वजह से ही बहुत सारी हॉलीवुड फिल्में इसमें बनी हैं. ये इंटरनेट ब्राउजिंग में भी फास्ट होते हैं. विंडोज के मुक़ाबले लाइनक्स की सिक्योरिटी काफ़ी मज़बूत होती है. वायरस का भी ख़तरा कम होता है. लाइनक्स ऑपरेटिंग सिस्टम पर चलने वाले सॉफ्टवेयर फ्री होते हैं और ये बहुत आसानी से इंटरनेट या वेंडर के पास उपलब्ध होते हैं.

ritika@chauthiduniya.com

विभिन्न साउंड सॉफ्टवेयर

- ऑडेसिटी: जीएनयू के अंतर्गत फ्री सॉफ्टवेयर है, जिसमें सीडी, टेप्स पर रिकॉर्ड कर सकते हैं. साउंड मिक्सिंग के लिए बेहतरीन सॉफ्टवेयर.
- हाइड्रोजन: इसमें ड्रम की अलग-अलग आवाज़ को एडिट कर सकते हैं.
- एक्सएमएमएस: यह विनऐंप जैसा एमपी थ्री प्लेयर है.

विभिन्न वीडियो सॉफ्टवेयर

- एविड मक्स: यह वीडियो मिक्स करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है. इसमें एक फॉर्मेट से दूसरे फॉर्मेट में वीडियो को बदला जा सकता है.
- स्लाइड शो क्रिएटर: इसमें बेहद आकर्षक स्लाइड शो बिना ज़्यादा माथापच्ची के बनाए जा सकते हैं.
- एम प्लेयर: यह वीडियो प्लेयर किसी भी फॉर्मेट के वीडियो को हाई रिजोल्यूशन में प्ले कर सकता है.
- वीएलसी: एमपी थ्री, वीडियो, डीवीडी प्लेयर.

विभिन्न ग्राफिक्स डिज़ाइन एप्लीकेशंस

- जीआईएमपी (GIMP) शॉप: यह सॉफ्टवेयर एडोब फोटोशॉप की तरह है, जिसमें फोटो एडिट कर सकते हैं.
- इंक्सस्कोप (INKSCOPE): कॉरेल ड्रा जैसा सॉफ्टवेयर, जिसमें वेक्टर ग्राफिक्स कर सकते हैं.
- कवर आर्टिस्ट (KOVER ARTIST): यह सीडी और डीवीडी के कवर बनाने के काम आता है.
- के टून (KToon): यह सॉफ्टवेयर कार्टून एनिमेशन बनाने के लिए इंडस्ट्री में भी इस्तेमाल होता है. इसे आप भी इस्तेमाल करके अच्छी एनिमेशन फिल्में बना सकते हैं.
- ओपन ऑफिस ड्रा: इस सॉफ्टवेयर में डायग्राम एवं ग्राफ्स आदि आसानी से बनाए जा सकते हैं.
- ग्राफिक्स डिजाइन एप्लीकेशन: यह थ्री डी ग्राफिकल डिजाइन के लिए इस्तेमाल किया जाता है.
- ब्लेंडर: इसमें थ्री डी मॉडल, आर्किटेक्चर, ग्राफिक्स, थ्री डी एनिमेटेड फिल्में बना सकते हैं.
- क्रिस्टल स्पेस: इससे रीयल टाइम थ्रीडी बना सकते हैं.
- एंटी वायरस: क्लैम एवी है.
- यूटीलिटी सॉफ्टवेयर: जी जिप (G Zip), फाइल कंप्रेस करने के लिए.
- ओपन ऑफिस: यह सॉफ्टवेयर माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस की तरह है, जो लाइनक्स के लिए मुफ्त उपलब्ध है. इसमें वर्ड, पावरप्वाइंट, स्प्रेडशीड एवं डाटाबेस हैं.
- पीडीएफ एडिट: पीडीएफ फाइल एडिट और रीड करने के लिए यह सॉफ्टवेयर इस्तेमाल कर सकते हैं.
- फायरफॉक्स: यह विश्व में सबसे अधिक इस्तेमाल होने वाला इंटरनेट ब्राउज़र है, जो मुफ्त है.
- वाइन (WINE): इससे विंडोज के किसी भी एप्लीकेशन को ओपन किया जा सकता है.

भारत में थ्री डी वर्ल्ड

श्री डी उत्पाद श्रेणी से राजस्व में 30 प्रतिशत के योगदान का लक्ष्य रखते हुए सोनी ने 3-डी उत्पाद जारी कर 3-डी मनोरंजन की दुनिया में नए युग की शुरुआत करने की घोषणा की है. सोनी इंडिया ने इस वर्ष 3-डी होम इंटरटेनमेंट सॉल्यूशन बाज़ार में उतारने की घोषणा की है. थ्री डी इनेबल्ड हार्डवेयर उत्पादों एवं सॉफ्टवेयर कंटेंट की मदद से सोनी ने भारत में 3-डी संस्कृति स्थापित कर उसे बढ़ावा देने की योजना बनाई है, ताक़ि यह तकनीक व्यापक दर्शक वर्ग के लिए आसानी से उपलब्ध हो सके. कंपनी ने 2012 में थ्री डी उत्पादों से 30 फ़ीसदी राजस्व कमाने का लक्ष्य रखा है. सोनी इंडिया के प्रबंध निदेशक मसारू तमागावा ने कहा कि हम थ्री डी उत्पादों एवं कंटेंट समाधान की विस्तृत रेंज उपलब्ध कराते हुए थ्री डी वर्ग में मार्केट लीडर बनने का इरादा रखते हैं. सोनी समूह की कंपनियों ने प्रोफेशनल एवं कंज्यूमर बाज़ारों में मिलजुल कर टेक्नोलॉजी एवं इंजीनियरिंग संसाधन पेश किए हैं. आगे इसकी बदौलत बाज़ार को थ्री डी अनुभव मिलेगा. सोनी थ्री डी मूल्य सीरीज़ के हर चरण में सक्रियता से जुड़ा है और वह ख़ुद द्वारा तैयार थ्री डी संसार का लाभ उठाते हुए पेशेवर समाधानों, कंज्यूमर इलेक्ट्रॉनिक्स, मूवी मेकिंग और गेमिंग में अपनी विशेषता का लाभ उठाएगा. सोनी इंडिया प्रोजेक्टर, प्रोफेशनल कैमरों, ब्राविया एलसीडी टीवी, ब्लू-रे डिस्क उत्पादों, डिजिटल-स्टिल कैमरों एवं प्ले स्टेशन में थ्री डी टेक्नोलॉजी पेश कर रहा है. थ्री डी उत्पादों की दुनिया में अपने नए आविष्कारों और नेतृत्व की बदौलत सोनी ग्राहकों का पसंदीदा साथी बने रहने के लिए प्रयासरत है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

पिछले दिनों धर्मपाल सत्यपाल ग्रुप (डीएस ग्रुप) ने इंडियन रेडक्रॉस सोसाइटी के साथ मिलकर अपने नोएडा स्थित कार्यालय में रक्तदान शिविर का आयोजन किया. इस अवसर पर डीएस ग्रुप के कई कर्मचारियों ने रक्तदान किया. ग़ौरतलब है कि डीएस ग्रुप माउथ फ्रेशनर, नॉन टोबैको पान मसाला और हास्पिटैलिटी के क्षेत्र में जाना माना नाम है.

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

खिलाड़ियों को फांसने के लिए अंडरवर्ल्ड पैसे के साथ-साथ हर वह हथकंडा अपनाता है, जिसके दम पर उन्हें मनमुताबिक़ काम करने को मजबूर किया जा सके.

पाकिस्तान, क्रिकेट, अंडरवर्ल्ड, सेक्स और मैच फिक्सिंग

हर मुक़ाबला फिक्स, हर गेंद फिक्स, हर रन फिक्स यानी क्रिकेट के मैदान पर होने वाली हर चाल पर करोड़ों का दांव लगा होता है. दर्शकों को लगता है कि खिलाड़ी मैदान पर शानदार खेल का प्रदर्शन कर रहे हैं, लेकिन असली खेल ड्रेसिंग रूम के अंदर और मैदान के बाहर खेला जाता है, जहां यह तय होता है कि कौन सा बल्लेबाज़ कौन सी गेंद पर चौका या छक्का लगाएगा और किस गेंद पर उसकी गिल्ली उड़ जाएगी. या फिर कौन गेंदबाज़ कब वाइड या नो बॉल फेंकेगा और कब अपनी ही गेंद पर छक्के लगवाएगा. यह पर्दे के पीछे की ऐसी कहानी है, जिसे सुनकर करोड़ों क्रिकेट प्रेमियों के कलेजे छलनी हो जाएंगे.

आदित्य पूजन

मैच फिक्सिंग के आरोप में अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट काउंसिल (आईसीसी) की एंटी करप्शन यूनिट की जांच के घेरे में आए पाकिस्तानी क्रिकेट टीम के तेज गेंदबाज़ मोहम्मद आसिफ की पूर्व गर्लफ्रेंड वीना मलिक ने दावा किया है कि आसिफ पहले भी मैच फिक्सिंग में लिप्त रहे हैं. और तो और, वीना ने यहां तक कहा है कि खिलाड़ियों को फंसाने के लिए आसिफ लड़कियों का इस्तेमाल करते रहे हैं. इन लड़कियों में मॉडल, अभिनेत्रियां, बार डांसर आदि शामिल हैं. वीना ख़ुद को इस अंदाज़ में पेश कर रही हैं, जैसे आसिफ ने उन्हें प्यार में धोखा दिया है, लेकिन सच्चाई यह नहीं है. सच तो यह है कि सट्टेबाज़ी और सेक्स का रिश्ता नया नहीं है और वीना जैसी न जाने कितनी हसीनाएं इसमें अपनी भूमिका बख़ूबी निभाती हैं. यह बात भी किसी से छुपी नहीं है कि क्रिकेट में सट्टेबाज़ी का खेल अंडरवर्ल्ड के इशारे पर खेला जाता है. टेस्ट क्रिकेट से लेकर टी-20 तक, इस खेल की हर चाल पर अंडरवर्ल्ड का साया है. अरबों के इस काले कारोबार में खिलाड़ियों की भूमिका तो बस प्यादों की होती है, इसके असल सूत्रधार तो विभिन्न देशों के राजनीतिज्ञ, क्रिकेट अधिकारी और फिल्म जगत के सितारे होते हैं.

कुछ ही ऐसे खिलाड़ी हैं, जो सट्टेबाज़ी के धंधे में अपनी मर्जी से शामिल होते हैं, उन्हें अक्सर इसके लिए मजबूर कर दिया जाता है. खिलाड़ियों को फांसने के लिए अंडरवर्ल्ड पैसे के साथ-साथ हर वह हथकंडा अपनाता है, जिसके दम पर उन्हें मनमुताबिक़ काम करने को मजबूर किया जा सके. अंडरवर्ल्ड के लोग अपने सूत्रों के माध्यम से खिलाड़ियों से संपर्क स्थापित करते हैं, मीठी-मीठी बातें कर उसे अपने प्रभाव में लेने की कोशिश करते हैं. यदि बात इतने से ही बन जाए और पैसे के लालच में खिलाड़ी अंडरवर्ल्ड के कहे मुताबिक़ काम करने को राजी हो जाए तो अच्छा है, लेकिन घी सीधी उंगली से न निकले तो सट्टेबाज़ दूसरे तरीक़े अपनाने से बाज नहीं आते. इसके बाद शुरू होता है सेक्स और ड्रग्स का खेल. मैदान के बाहर होने वाली अनौपचारिक पार्टियों या समारोहों में खिलाड़ियों को चोरी-छुपे या जानबूझ कर नशीली चीजें दी जाती हैं. फिर लड़कियों को उनके पास भेजा जाता है. खिलाड़ियों का युवा मस्तिष्क सट्टेबाज़ों के इस खेल को समझ पाए, उससे पहले ही वे उनके जाल में फंस चुके होते हैं. व्यक्तिगत जीवन में उनके ग़लत-सही कामों की सीडी बन जाती है और फिर वे वही करते हैं, जो करने के लिए उनसे कहा जाता है.

क्रिकेट के खेल में मैच फिक्सिंग और अंडरवर्ल्ड का यह तमाशा नया नहीं है. 1980 के दशक के आख़िरी सालों तक शारजाह क्रिकेट मैचों का एक महत्वपूर्ण केंद्र था. भारत और पाकिस्तान के अलावा हर देश की क्रिकेट टीम यहां क्रिकेट खेलने आया करती थी, लेकिन आज शारजाह क्रिकेट के मानचित्र से पूरी तरह ग़ायब हो चुका है. इसकी एकमात्र वजह है मैच फिक्सिंग. शारजाह में होने वाले मुक़ाबलों के दौरान अंडरवर्ल्ड डॉन दाउद इब्राहिम यहां अक्सर आया करता था. उसके साथ-साथ फिल्मी सितारों और उद्योगपतियों की एक फौज भी यहां मौजूद होती थी. शारजाह में क्रिकेट मैचों का आयोजन भले बंद हो गया, लेकिन क्रिकेट के खेल पर अंडरवर्ल्ड और सट्टेबाज़ी का साया बदस्तूर जारी है. क्रिकेट की लोकप्रियता को बढ़ाने के लिए नए-नए प्रयोग किए जा रहे हैं, टी-20 क्रिकेट को बढ़ावा दिया जा रहा है, खेल को दुनिया के ऐसे हिस्सों में पहुंचाने की कोशिशें की जा रही हैं, जहां अब तक यह मौजूद नहीं रहा है. इससे क्रिकेट का बाज़ार तो बढ़ रहा है, लेकिन इसके साथ-साथ भद्रजनों के इस खेल का स्वरूप भी लगातार काला होता जा रहा है. सट्टेबाज़ी के इस खेल को आईपीएल जैसे क्रिकेट आयोजनों से और बढ़ावा मिल रहा है. चौथी दुनिया ने आईपीएल-3 की शुरुआत से एक महीने पहले ही इस रहस्य से पर्दा उठा दिया था कि आईपीएल के तक़रीबन सभी मुक़ाबले फिक्स हैं. हमने यह भी कहा था कि लीग के तीसरे सीजन के फाइनल मुक़ाबले में मुंबई इंडियंस की टीम खेलेगी और ऐसा ही हुआ. आईपीएल ख़त्म होने के बाद कोच्चि टीम में स्वीट ईक्विटी को लेकर चर्चा में आई सुनंदा पुष्कर ने अपने बयानों से चौथी दुनिया की रिपोर्ट की पुष्टि कर दी. उन्होंने यह कहा था कि लीग की टीमों में दाउद इब्राहिम का पैसा लगा है. अंडरवर्ल्ड के लोग क्रिकेट मुक़ाबलों पर पैसा लगाते हैं और सट्टेबाज़ी की मदद से मुक़ाबलों के नतीजों को प्रभावित कर लागत का कई गुना मुनाफ़ा कमा लेते हैं. उनके इस खेल में खिलाड़ी से लेकर क्रिकेट के अधिकारी, राजनेता और फिल्मी सितारे तक शरीक होते हैं. सट्टेबाज़ी का साया क्रिकेट को किस कदर अपने क़ब्ज़े में ले चुका है, इसका अंदाज़ा इसी बात से लगता है कि आजकल तक़रीबन हर मुक़ाबला फिक्स होता है. मुक़ाबलों के नतीजों को फिक्स करना तो अब पुराना पड़ चुका है, अब तो हर गेंद, हर रन, हर विकेट पर सट्टेबाज़ों का पैसा लगा है. टेलीविज़न पर हमें जो दिखाई देता है, वह तो केवल तमाशा है, असली खेल तो मैदान के बाहर और पर्दे के पीछे से खेला जाता है. पाकिस्तानी क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान राशिद लतीफ ने तो स्पष्ट कह भी दिया है कि क्रिकेट का हर मैच आजकल फिल्म की एक पूर्व निर्धारित स्क्रिप्ट की तरह होता है. सच्चाई यह है कि क्रिकेट का खेल दर्शकों को मूर्ख बनाने और अंडरवर्ल्ड एवं सट्टेबाज़ों की काली कमाई का एक ज़रिया बन चुका है.

ख़बरों पर भरोसा करें तो मोहम्मद आमिर आईसीसी के गवाह बनने की सोच रहे हैं, जबकि मोहम्मद आसिफ पाकिस्तान लौट कर आना ही नहीं चाहते थे. उन्हें डर था कि पाकिस्तान पहुंचते ही उनकी हत्या कर दी जाएगी. हालांकि ऐसा नहीं हुआ, लेकिन हो भी जाए तो कोई आश्चर्य नहीं, क्योंकि सट्टेबाज़ों के तार हर जगह मौजूद हैं. यदि आईसीसी और स्कॉटलैंड यार्ड की जांच-पड़ताल में उनके ख़िलाफ़ पुख्ता सबूत मिलने की नौबत आएगी तो वे आसिफ को रास्ते से हटाने से भी नहीं हिचकेंगे. आसिफ पर पहले भी ड्रग्स के सेवन का आरोप लग चुका है और इसके लिए उन्हें प्रतिबंधित भी किया गया था. अपने छोटे से करियर में उन्होंने जितनी संपत्ति अर्जित कर ली है, उससे काली कमाई की बू आती है. अन्य चीजों के अलावा आसिफ के पास चार बंगले हैं, जिसमें अकेले लाहौर स्थित इटालियन स्टाइल के विलानुमा बंगले की क़ीमत ही 6.5 लाख पाउंड है. क्रिकेट के अलावा उनकी कमाई का और कोई ज़रिया नहीं है, फिर इतनी संपत्ति उनके पास कहां से आई, यह रहस्यमय है.

इन सबके बीच सबसे ज़्यादा चिंता पाकिस्तान की हालत को लेकर होती है. भूख, ग़रीबी, बेरोज़गारी, हिंसा, राजनीतिक अस्थिरता जैसी मुश्किलें झेलने को मजबूर इस मुल्क के लोगों के लिए ख़ुश होने की अकेली वजह क्रिकेट ही है. जब टीम जीतती है तो पूरे पाकिस्तान में ईद सा माहौल बन जाता है. भारत की ही तरह पाकिस्तान में भी क्रिकेट एक धर्म की तरह है और क्रिकेटर्स लाखों-करोड़ों देशवासियों के आदर्श हैं. सट्टेबाज़ों, अंडरवर्ल्ड, फिल्म स्टारों, खिलाड़ियों और अधिकारियों की मिलीभगत का नतीजा यह है कि पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में अछूत बनता जा रहा है. लाहौर में श्रीलंका टीम पर हुए आतंकी हमले के बाद से विदेशी टीमें वहां जाने से पहले ही इंकार कर चुकी हैं. पाकिस्तान में अंतरराष्ट्रीय मुक़ाबलों का आयोजन नहीं होता, उसे होम सीरीज़ खेलने के लिए इंग्लैंड की शरण लेनी पड़ती है. लेकिन अब शायद ऐसा नहीं हो. इंग्लैंड और वेल्स क्रिकेट बोर्ड इस पर दोबारा विचार कर रहा है और ज्यादा संभावना इसी बात की है कि वह अब इसकी अनुमति नहीं देगा. दूसरी ओर न्यूज़ीलैंड और कुछ अन्य विदेशी टीमों ने साफ तौर पर इशारा कर दिया है कि खिलाड़ियों पर लगे मैच फिक्सिंग के आरोपों की जांच से पहले वे पाक टीम के साथ मुक़ाबलों में नहीं उतरेंगी. यदि ऐसा हो गया तो पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट में पूरी तरह अलग-थलग पड़ जाएगा. यह न तो पाकिस्तान के लिए अच्छा होगा, न ही वहां की जनता के लिए और न ही अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट के लिए.

aditya@chauthiduniya.com

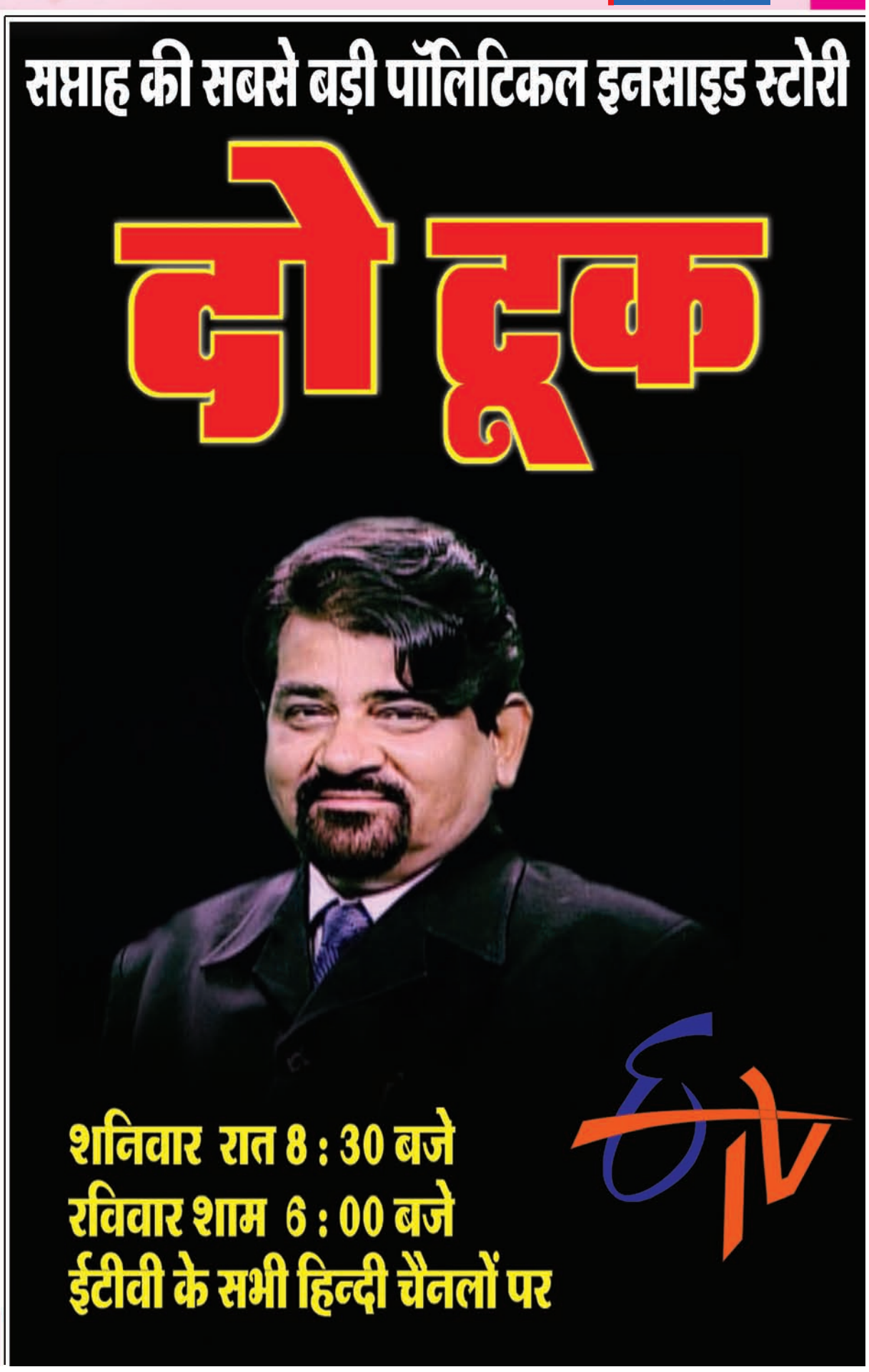

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

ऐश्वर्या को उम्मीद है कि उनकी फिल्म रोबोट सुपरहिट होगी. उधर काफ़ी समय से हां-ना के बाद ऐश्वर्या ने श्याम बेनेगल की बंगाली फिल्म चमकी चमेली में भी काम करना स्वीकार कर लिया हैं.

नेहा की मुश्किल

नेहा धूपिया अपनी आने वाली फिल्म एक्शन रिप्ले को लेकर काफ़ी उत्साहित हैं. वैसे तो इस फिल्म में उनके साथ ख़ाकी के बाद अक्षय और ऐश्वर्या भी एक साथ नज़र आएंगे, पर नेहा को उम्मीद है कि इन बड़े स्टारों की मौजूदगी के बावजूद दर्शकों का ख़ास अटेंशन उन्हें मिलेगा. नेहा ने बताया कि जब विपुल शाह ने उन्हें इस फिल्म का प्रस्ताव दिया तो उनकी ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा. जबकि उनके पास नेहा के अलावा अन्य कई अभिनेत्रियों का विकल्प भी था, फिर भी उन्होंने नेहा को चुना, क्योंकि इस रोल के लिए जिस तरह का कॉन्फिडेंस चाहिए था, वह उन्हें नेहा में दिखा. यूं तो नेहा छोटे से रोल में भी अपनी छाप छोड़ जाती हैं, लेकिन फिल्म के हिट होने का फ़ायदा अन्य अभिनेत्रियां ले जाती हैं. बिंदास नेहा को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि फिल्म में उनका रोल कितना बड़ा है या कितना असरदार. उन्हें ख़ुद पर भरोसा है कि वह अपने अभिनय से उस रोल को असरदार बना देंगी. यह सब तो ठीक है नेहा, लेकिन फिल्म इंडस्ट्री में इससे बात नहीं बनती. स्मार्ट और टैलेंटेड होने के बाद भी कब तक सहनायिका बनकर ख़ुश होती रहेंगी? बॉलीवुड में अब तक उनकी बहुत कम फिल्में ही हिट हुईं, पर उन हिट फिल्मों का श्रेय उन्हें नहीं मिल पाया. फिल्म कयामत में उन्हें बॉलीवुड में नोटिस किया गया, यह फिल्म हिट भी रही थी. इस फिल्म में वह अजय देवगन के अपोजिट थीं. उन पर फिल्माया गाना, वो लड़की बहुत याद आती है... उस दौर का हिट रोमांटिक सॉन्ग था, लेकिन तब भी फिल्म की सफलता का श्रेय उन्हें नहीं दिया गया. इसके बाद सिंह इज किंग में भी वह सशक्त भूमिका में नज़र आई थीं, पर इस फिल्म के हिट होने का श्रेय कैटरीना ले गईं. नेहा ने कमर्शियल फिल्मों में अपनी असफलता का विश्लेषण करते हुए ऑफबीट फिल्मों की तरफ रुख़ कर लिया है. उनकी आने वाली कुछ फिल्में हैं रफ्तार, आई एम 24, देयर इज लव टू ओबामा और पप्पू कांट डांस साला.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

छोटी उमर और बड़े हौसले प्राची देसाई

रॉक ऑन की सफलता के बाद प्राची देसाई और फ़रहान अख्तर फिर से एक साथ दिखने वाले हैं. इस बार वे किसी फिल्म में नहीं, बल्कि छोटे पर्दे पर स्क्रीन स्पेस शेयर करते नज़र आएंगे. रविवार को प्रसारित होने वाले स्टार सिंटा-सुपरस्टार का जलवा के ख़ास एपिसोड को प्राची और फ़रहान होस्ट करेंगे. इसमें कई बड़े स्टार परफॉर्म करेंगे. टेलीविजन से बॉलीवुड तक का सफ़र प्राची के लिए आसान नहीं था. प्राची कहती हैं कि इस सबका श्रेय काफ़ी हद तक एकता कपूर के सीरियल को जाता है. जी टीवी पर प्रसारित होने वाले उनके सीरियल कसम से द्वारा प्राची को ख़ास पहचान मिली. प्राची ने एकता के ऑफिस के बगल में ही फ्लैट ख़रीदा है. वैसे तो उन्होंने इसके लिए कई अपार्टमेंट देखे, पर ओबेरॉय स्प्रिंग उन्हें पसंद आया. सीरियल में बहन जी टाइप रोल के बाद प्राची अब यंग, ख़ूबसूरत और सेक्सी रोल में दिखने लगी हैं. उनकी फिल्में रॉक ऑन, लाइफ पार्टनर, वंस अपॉन ए टाइम आदि हैं और

सीरियल कसम से द्वारा प्राची को ख़ास पहचान मिली. प्राची ने एकता के ऑफिस के बगल में ही फ्लैट ख़रीदा है. वैसे तो उन्होंने इसके लिए कई अपार्टमेंट देखे, पर ओबेरॉय स्प्रिंग उन्हें पसंद आया.

जल्द ही उनकी अगली फिल्म जोकर रिलीज होने वाली है. फिल्मों और एड फिल्मों में वह समान रूप से काम कर रही हैं. वह भारत में न्युट्रोजीना की ब्रांड एंबेसडर तो हैं ही साथ ही उन्हें विज्ञापन भी ख़ूब मिलने लगा है. यही नहीं उन्हें कई प्रोडक्ट लांच के मौके पर ही भी बुलाया जाने लगा है और वह अपने फैंस के साथ लगातार संपर्क में बने रहने के लिए इन अवसरों पर ख़ुशी-ख़ुशी पहुंचती भी हैं. हाल ही में राजधानी दिल्ली में हुए एक मोबाइल फोन को लांच करते हुए प्राची नज़र आईं. प्राची की क़िस्मत उन पर मेहरबान है, तभी तो वह पहले छोटा पर्दा, फिर बड़ा पर्दा और अब प्रोडक्ट भी एंडोर्स कर रही हैं. इतनी कम उम्र में ढेर सारी उपलब्धियां, मुबारक हो प्राची!

ऐश्वर्या बनेंगी चमेली

शादी के बाद भी कजरारे गर्ल का फिल्मों में काम करना जारी है, भले ही वह गिनी-चुनी फिल्मों में काम करती हैं. अपनी आने वाली तेलुगु वर्जन फिल्म रोबोट को लेकर वह काफ़ी उत्साहित हैं. इस फिल्म में वह रजनीकांत के साथ नज़र आएंगी. इसके डायरेक्टर शंकर हैं और प्रोड्यूसर कलानिधि मारन. यह भारत की ही नहीं, बल्कि एशिया की सबसे महंगी फिल्म है. प्रमोशन के दौरान ऐश्वर्या ने बताया कि इस फिल्म में काम करके उन्हें बेहद ख़ुशी हुई. यह फिल्म कई स्टारों का बेहतरीन कॉम्बीनेशन है यानी डायरेक्टर शंकर, ऑस्कर विजेता ए आर रहमान, तमिल स्टार रजनीकांत और मिस वर्ल्ड ऐश्वर्या. ऐश्वर्या को उम्मीद है कि यह फिल्म सुपरहिट होगी. उधर काफ़ी समय से हां-ना के बाद ऐश्वर्या ने श्याम बेनेगल की बंगाली फिल्म चमकी चमेली में भी काम करना स्वीकार कर लिया हैं. ऐश्वर्या की ख़ूबसूरती को चाहने वाले पूरी दुनिया में हैं. हॉलीवुड स्टूडियो उनकी निज़ी ज़िंदगी पर एक डॉक्यूमेंट्री बना रहा है, लेकिन ऐश्वर्या इससे ख़ुश नहीं हैं, क्योंकि बच्चन परिवार की बहू बनने के बाद वह ख़ुद को लेकर काफ़ी सजग हो गई हैं. वह ऐसा कोई काम नहीं करना चाहतीं, जिससे उनके परिवार की इज़्ज़त पर आंच आए. पहले ही उनका नाम सलमान और विवेक के साथ जुड़ चुका है, जिसे शादी के बाद भी कभीकभार मीडिया में उछाला जाता है. लेकिन घर आई लक्ष्मी को ऐश्वर्या मना भी कैसे करें, इसलिए उन्होंने कहा है कि वह इस ऑफर के लिए तैयार हैं, पर अपनी शर्तों के मुताबिक़. उनकी बात मान ली गई. इस डॉक्यूमेंट्री की शूटिंग उनके घर पर होगी और इसकी एडिटिंग भी उनके मनमुताबिक़ की जाएगी.

प्रीव्यू

दिन दूनी रात चौगुनी की गति से बढ़ती महंगाई में सामान्य स्कूल शिक्षक के लिए जीवन कठिनाइयों का सफ़र हो सकता है, उस पर दिल्ली जैसा महानगर, जहां सूरज-चांद की कम और दौलत की रोशनी ज़्यादा फैली होती है. फिल्म दो दूनी चार डीडीए फ्लैट में रहने वाले एक मध्यमवर्गीय परिवार द्वारा आधुनिक और ग्लैमरस जीवनशैली का लबादा ओढ़ने की जिद की कहानी है. सिल्वर स्क्रीन पर लगभग 30 साल बाद ऋषि कपूर और नीतू सिंह की जोड़ी की वापसी फिल्म का एक पंच है. फिल्म में नीतू सिंह ऋषि कपूर की पंजाबन पत्नी के रोल में हैं, जो दिल्ली के लाजपतनगर इलाक़े में रहते हैं. उनके दो बच्चे हैं. दुग्गल परिवार का मुखिया ऋषि कपूर स्कूल टीचर है. मिस्टर दुग्गल का वेतन उनके परिवार के रहन-सहन के हिसाब से पर्याप्त नहीं है. उनकी एक टीन एज बेटी (अदिति वासुदेव) है, जिसके कई शौक और ज़रूरतें हैं. एक अल्ट्रामॉडर्न बेटा (अर्चित कृष्ण) है. उनकी बीवी (नीतू सिंह) एक आरामदेह और नफ़ासत भरी ज़िंदगी चाहती है, लेकिन वह अपनी आमदनी में सामान्य गृहस्थी की ज़रूरतों की ही पूर्ति कर पाते हैं. बच्चों एवं पत्नी के सपनों को पूरा करने की कोशिश में मिस्टर दुग्गल और उनके परिव-ारवालों के बीच बनते-बिगड़ते रिश्तों और इस बीच होती घटनाओं से हुए गोलमाल-गड़बड़ियों के साथ परिवार के सदस्यों का सामना जीवन की सच्चाइयों से होता है. इसी लाइन पर फिल्म की कहानी आगे बढ़ती है. फिल्म दो दूनी चार प्लानमैन मोशन पिक्चर्स के बैनर तले हबीब फैजल के निर्देशन में बनी है. यह वाल्ट डिजनी की पहली नॉन एनिमेटेड, लाइव एक्शन फिल्म है. हबीब फैजल को अपनी पहली ही फिल्म में 1970-80 के दशक की रोमांटिक जोड़ी को निर्देशित करने का मौक़ा मिला है. ज़ाहिर है, उन्हें ज़्यादा मेहनत करने की ज़रूरत नहीं हुई होगी. संगीत दिया है मीत ब्रदर्स ने. मुख्य कलाकार हैं ऋषि कपूर, नीतू सिंह, अर्चित कृष्ण एवं अदिति वासुदेव. फिल्म आगामी 8 अक्टूबर को रिलीज होगी.

दो दूनी चार

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 27 सितंबर-03 अक्टूबर 2010

www.chauthiduniya.com

बिहार विधानसभा चुनाव

सज गई सेना

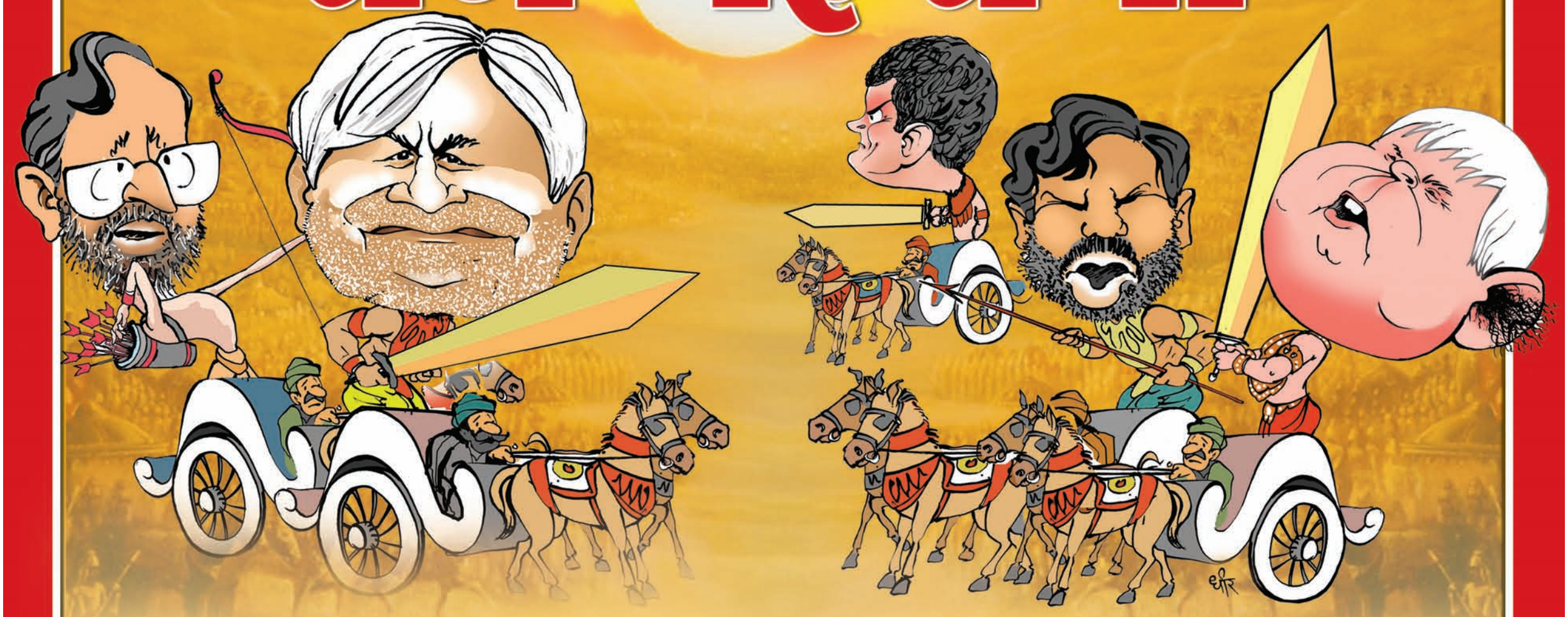

सरोज सिंह

बिहार में चुनावी महासंग्राम के लिए अपनी-अपनी सेनाओं को सजाने और उसे चमकाने का काम सभी दिग्गजों ने लगभग पूरा कर लिया है. चुनावी हथियारों से लैस करके सेना को मैदान-ए-जंग में कूदने की हरी झंडी चरणबद्ध तरीके से दिखाई जा रही है. जहां पेच फंस रहा है, उसे रतजगा करके सुलझाया जा रहा है, ताकि एक-एक पल का फ़ायदा उठाया जा सके. जातीय समीकरण टनाटन रहे, इसके लिए दूसरे दलों के नेताओं को गले लगाया जा रहा है. इस दौरान लालू एवं नीतीश के बीच ज़ुबानी जंग भी सुर्खियां बटोर रही है. कहें तो बिहार चुनावी मोड में आ चुका है और नेता गरज-गरज कर कहने लगे हैं कि हम सत्ता में आ रहे हैं.

तैयारियां तो पहले से ही चल रही थीं, पर चुनाव की घोषणा के साथ तो नेताओं ने राजधानी एक्सप्रेस जैसी रफ्तार पकड़ ली. लालू प्रसाद, नीतीश कुमार एवं रामविलास पासवान ने पार्टी कार्यालयों में समय गुजारना शुरू किया और टिकट चाहने वालों से बायोडाटा लेने लगे. दिन के उजाले में यह चलता रहा, पर असली खेल सूरज डूबने के बाद हुआ. दिन में विकास-विकास की रट लगाने वाले नेता पूरी रात क्षेत्रवार जातीय गणित फिट करने में गुजारने लगे. लगभग सभी दलों की कोशिश रही कि हर जिले में दलीय उम्मीदवारों का ऐसा जातीय ताना-बाना बुना जाए कि ज़्यादा से ज़्यादा लाभ उठाया जा सके. ज़िले के हिसाब से जातीय तार पिरोए गए, ताकि उस ज़िले के सभी दलीय प्रत्याशियों को इस कवायद का लाभ मिल सके. याद कीजिए 1990 के दशक में सोशल इंजीनियरिंग के दायरे में मुख्य तौर पर पिछड़ों को तरजीह दी गई थी, लेकिन हालात अब बदल गए हैं और बिहार के इस चुनाव में सभी दलों ने सोशल इंजीनियरिंग के तहत अगड़ों और अति पिछड़ों को फिट किया. एक अनुमान के अनुसार, बिहार में जातियों और उनकी उपजातियों की संख्या चार सौ के आसपास है. इसमें अबकी बार कुशवाहा एवं अगड़ी जातियों को ज़्यादा तरजीह दी गई. ऐसा इसलिए भी किया गया कि नेताओं का अनुमान यह है कि अगड़ी जातियों के वोटर इस बार ऊहापोह में है. चुनाव नए परिसीमन पर हो रहे हैं, इस कारण जीत-हार के बारे में सही आकलन मुश्किल है. इसलिए सभी दलों ने कोशिश यह की है कि अगड़ी जातियों को ज़्यादा से ज़्यादा लुभाया जाए. यही हाल कुशवाहा वोटरों को लेकर भी है. उपेंद्र कुशवाहा द्वारा राजगीर सम्मेलन में दिए गए भाषण के बाद इस समाज के लोग तय नहीं कर पा रहे हैं कि आख़िर किया क्या जाए. कांग्रेस ने इस स्थिति को समझते हुए बिना देर किए नागमणि को अपने पाले में ले लिया. नागमणि का दावा है कि आप इतिहास उलट कर देख लीजिए, मैं जिधर रहा, उसी की सरकार बनी और चली. अब कांग्रेस में आ गया हूं तो तय मानिए कि सरकार कांग्रेस की ही बनने वाली है. लालू एवं नीतीश को ठग और झूठा बताते हुए वह कहते हैं कि कुशवाहा समाज को धोखा देने वाले इन दोनों नेताओं को जनता सबक सिखाएगी. नागमणि मानते हैं कि आज़ादी के इतने दिनों बाद भी कुशवाहा समाज को उसका हक़ नहीं मिल पाया. उन्होंने उम्मीद जताई कि सोनिया गांधी एवं राहुल गांधी इस समाज को निराश नहीं करेंगे. आनंद मोहन का साथ मिल जाने के बाद तो कांग्रेस को मिथिलांचल में एक नई ताक़त मिल गई है. मिथिला के इलाक़े में पहले ही चरण में चुनाव होना है, इसलिए कांग्रेस चाहती है कि इस इलाक़े में पार्टी का दमदार प्रदर्शन हो, ताकि बाकी इलाक़ों में सही संदेश जा सके. रंजीता रंजन भी इस काम में जी-जान से जुटी हुई हैं. कांग्रेस चाहती है कि इन दमदार सेनाओं के मार्फत मिथिला की कम से कम पंद्रह सीटों पर अपना क़ब्ज़ा जमा लिया जाए. डॉ. जगन्नाथ मिश्रा का सहयोग पूरी तरह मिला तो कांग्रेस की इस इलाक़े में चांदी हो सकती है.

जदयू ने भी इस दौरान जातीय गणित को ठीक करने में अपना पसीना बहाया. पूर्व बिहार में अपनी पैठ को और मजबूत करने के लिए उसने दिग्विजय सिंह की पत्नी पुतुल सिंह को समर्थन देने का फ़ैसला किया है. इसके अलावा इस इलाक़े के दबंग यादव नेता गिरधारी यादव को भी पार्टी में शामिल कराया गया है. परिवारवाद को लेकर नीतीश कुमार को जो कथित परेशानी थी, उससे भी उन्होंने तौबा कर लिया है. इस मामले में उन्होंने कहा कि लगता है यह प्रयोग सफल नहीं रहा. इसका कारण पूछने पर उन्होंने कहा कि यह समय से पहले का प्रयोग था. बताते चलें कि अगर नीतीश इस दफा भी नेताओं के परिवारवालों को टिकट से वंचित करते तो सबसे ज़्यादा परेशानी में अगड़ी जाति के नेता ही फंसते. ऐसे में ये नेता मन से नीतीश का साथ नहीं देते और पार्टी को इसका नुक़सान उठाना पड़ता. इसकी भनक लगते ही नीतीश कुमार ने अपने पैर पीछे खींच लिए. कोसी के इलाक़े में जदयू-भाजपा गठबंधन को पिछले चुनाव में भारी सफलता मिली थी. इसलिए इस बार इस किले को बचाने के लिए नीतीश कुमार कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं. लालू प्रसाद एवं रामविलास भी पीछे नहीं हैं. इन दोनों नेताओं ने भी टिकट वितरण से लेकर बाहर से नेताओं को लेने में सोशल इंजीनियरिंग का पूरा ख्याल रखा. इस गठबंधन ने लगभग हर ज़िले के लिए टिकट देने में यह ध्यान रखा कि ज़िले की आबादी के हिसाब से उम्मीदवारों को हिस्सेदारी दी जाए. अगर लोजपा के पास नेता नहीं मिला तो राजद से लिया गया और अगर राजद के पास नेता नहीं मिला तो लोजपा से लिया गया.

भाजपा ने भी नागमणि की बहन एवं सारण के राजपूत नेता मनोज कुमार सिंह को पार्टी में शामिल कराया है. दरअसल नेता यह जानते हैं कि विकास का नारा चाहे जितना भी लगा लिया जाए, बिहार में चुनाव जातीय ताने-बाने के बीच ही होगा. जिस दल की सोशल इंजीनियरिंग जितनी सटीक होगी, उस दल को उतना ही चुनावी फायदा होगा. इस टास्क के साथ नेताओं के बीच ज़ुबानी जंग भी काफी तेज़ हो गई है. मकसद जनता के बीच मनोवैज्ञानिक बढ़त लेना है. लालू कह रहे हैं कि नीतीश चुनाव जीतने के लिए तंत्र-मंत्र का सहारा ले रहे हैं तो नीतीश कह रहे हैं कि लालू डर गए हैं. नीतीश कुमार कहते हैं कि लालू प्रसाद की वापसी संभव नहीं है तो लालू जवाब देते हैं कि नीतीश अपने लिए नया क्वार्टर खोज लें. चुनावी तपिश के साथ यह जंग और परवान चढ़ेगी और हर खेमे की सेना एक-दूसरे पर वार करेगी. डर बस इस बात का है कि ज़ुबानी जंग का स्तर गिर न जाए और व्यक्तिगत हमले न शुरू हो जाएं. वरिष्ठ नेता इंद्र कुमार कहते हैं कि बिहार के चुनाव पर पूरी दुनिया की नज़र है, इसलिए यहां के नेताओं को यह ज़रूर ख्याल रखना चाहिए कि चुनाव प्रचार के दौरान कहीं ऐसी बात न कह दी जाए, जिससे बिहार की इज्जत गिरे. उन्होंने मर्यादा में रहकर एक-दूसरे पर राजनीतिक हमले करने की सलाह नेताओं को दी है. कुल मिलाकर कहा जाए तो महाभारत शुरू है और लोगों को इंतजार है मतदान के दिन का, ताकि वे अपना फ़ैसला सुना सकें.

चुनाव नए परिसीमन के अंतर्गत हो रहे हैं, इस कारण जीत-हार के बारे में सही आकलन मुश्किल है. इसलिए सभी दलों ने कोशिश यह की है कि अगड़ी जातियों को ज़्यादा से ज़्यादा लुभाया जाए. यही हाल कुशवाहा वोटरों को लेकर भी है. उपेंद्र कुशवाहा द्वारा राजगीर सम्मेलन में दिए गए भाषण के बाद इस समाज के लोग तय नहीं कर पा रहे हैं कि आख़िर किया क्या जाए. कांग्रेस ने इस स्थिति को समझते हुए बिना देर किए नागमणि को अपने पाले में ले लिया.

feedback@chauthiduniya.com

मुंडा सरकार नागपुर के रिमोट से नियंत्रित होगी. उधर विपक्षी दलों ने भी सरकार बनाने में बड़ी डील होने का आरोप लगाया है.

तनाव इस क़दर बढ़ता जा रहा है कि यह कभी भी विकराल रूप धारण कर सकता है.

चुनावी तड़का

एक पर एक फ्री का फंडा

पर्व के मौसम में बाज़ार का फंडा राजनीति में भी लागू हो रहा है. हो भी क्यों न, चुनाव भी तो एक पर्व है. निर्दलीय विधायक विजेंद्र चौधरी इसे अच्छी तरह समझ गए. राज्यसभा में रामविलास पासवान को वोट क्या दिया, उन्हें बाज़ार का नियम भी समझा दिया. अपने लिए उस समय चुनावी टिकट का वादा कराया, पर अब जब सिंबल मिलने का समय आया तो कहने लगे, अभी तो एक पर एक फ्री का मौसम है सर! रामविलास पासवान चौंके तो विजेंद्र चौधरी ने समझाया कि बाज़ार का नियम मानने से फ़ायदा ही फ़ायदा है. जब विजेंद्र को लगा कि वह पासवान जी को समझाने में सफल हो रहे हैं तो अपनी पत्नी के लिए टिकट की मांग कर दी. लगता है, यह सौदा पट ही जाएगा.

पूनम को देवरानी से परेशानी

खगड़िया की जदयू विधायक पूनम देवी यादव के लिए इस बार चुनाव जीतना आसान नहीं होगा. दरअसल इस बार उनके लिए उनकी देवरानी ही परेशानी बनकर सामने आने वाली हैं. कल तक भाजपा से ताल्लुक रखने वाली ज़िला परिषद अध्यक्ष एवं पूर्व सांसद रामशरण यादव की पुत्रवधू सुशीला देवी द्वारा लोजपा-राजद गठबंधन के टिकट पर खगड़िया से विधानसभा चुनाव लड़ने की बात सामने आ रही है. पूनम देवी खगड़िया के पूर्व विधायक रणवीर यादव की पत्नी हैं, जबकि सुशीला देवी रणवीर के चचेरे भाई एवं कोसी विकास पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष भरत यादव की पत्नी हैं. सुशीला देवी पूनम देवी यादव के लिए कितनी भारी साबित होंगी, यह कहना तो शायद जल्दबाजी होगी, लेकिन यह कहने में शायद कोई संकोच नहीं है कि घर फूटे गंवार लूटे वाली बात पूनम के लिए साबित होने वाली है. इधर दो देवियों की इस लड़ाई को दिलचस्प बनाने के लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की सदस्य प्रीति वर्मा खम ठोकने को तैयार बैठी हैं. वह अपने दम पर चुनावी वैतरणी पार करने का दावा कर रही हैं. उनका कहना है कि कुशवाहा जाति के साथ-साथ अन्य बिरादरी के मतदाताओं का समर्थन उन्हें प्राप्त है. इस बार चुकती घराने की एक नहीं चलेगी.

टिकट दो और सीट लेकर जाओ

चर्चित आर्थोपैडिक डॉ. अतुल कलाम भी विधानसभा चुनाव लड़ने के मूड में हैं, बशर्ते कोई दल बुलाकर टिकट दे. उनका कहना है कि उनकी छवि जनसरोकार के लिए सर्वोत्तम है और उनके जैसे लोगों को टिकट हेतु दिल्ली-पटना की दौड़ लगानी पड़े, यह मुमकिन नहीं है. डॉ. कलाम रेडक्रॉस सोसाइटी के सचिव हैं और प्राकृतिक एवं अन्य आपदाओं के वक्त बिना कोई भेद किए पीड़ितों की सेवा के लिए तत्पर रहते हैं. उनकी धारणा है कि ग़रीबों की सेवा कभी बेकार नहीं जाती. हालांकि डॉ. कलाम महिषी विधानसभा क्षेत्र के भेलाही गांव के रहने वाले हैं और बाढ़ पीड़ितों को हर साल यह अपनी सेवाएं प्रदान करते हैं. उनका कहना है कि आप हमें टिकट दो, हम आपको सीट जीतकर देंगे.

मुसलमान प्रत्याशी और रामनाथ की पीड़ा

समस्तीपुर विधानसभा से लगातार तीन बार से जीत रहे जननायक कर्पूरी ठाकुर के पुत्र एवं बिहार सरकार के मंत्री रामनाथ ठाकुर के बारे में चर्चा है कि वह इस बार क्षेत्र बदल सकते हैं. जदयू नेतृत्व को लगने लगा है कि ज़िले के सभी दस विधानसभा क्षेत्रों में सफलता के लिए किसी भी एक विधानसभा क्षेत्र से मुस्लिम प्रत्याशी देना पार्टी की सेहत के लिए ज़्यादा अच्छा रहेगा. समस्तीपुर विधानसभा क्षेत्र से मुख्य विपक्षी दल राजद पिछले कई चुनावों से मुस्लिम उम्मीदवार को मैदान में उतार रहा है. ज़िले की राजनीति में ऐसा समझा जाता है कि राजद को मुस्लिम प्रत्याशी देने का लाभ पूरे ज़िले में मिलता है. इस प्रकार की चर्चा से जदयू में भी मुस्लिम उम्मीदवारी की मांग ज़ोर पकड़ने लगी है. पटना में कुछ आला नेताओं को समझाया जा रहा है कि समस्तीपुर से मुस्लिम प्रत्याशी देना ठीक रहेगा. बस इसी बात से मंत्री जी की नींद उड़ी हुई है. जगह-जगह बोल रहे हैं कि समस्तीपुर से ही चुनाव लड़ूंगा.

अफवाह से परेशान सुरेंद्र यादव

कहते हैं कि अफवाह तो राजनीति में रस घोलती है. अगर यह न हो तो राजनीति का मज़ा ही जाता रहेगा, लेकिन राजद के पूर्व मंत्री एवं गया के बेलागंज विधानसभा क्षेत्र के विधायक सुरेंद्र यादव विरोधियों द्वारा चुनाव क्षेत्र बदलने की फैलाई गई अफवाह से खासे परेशान नज़र आ रहे हैं. ऐसी नौबत आ गई कि कार्यकर्ताओं के बीच लिखित बयान देकर सुरेंद्र यादव को सफाई देनी पड़ी कि मैं क्षेत्र नहीं बदल रहा हूं, बेलागंज से ही चुनाव लड़ूंगा. नए परिसीमन में बेलागंज विधानसभा क्षेत्र का कुछ हिस्सा जो भूमिहार बहुल होने के बावजूद सुरेंद्र यादव का समर्थक था, वह कटकर नए बने टिकारी विधानसभा क्षेत्र में जुड़ गया है. इसी आधार पर अफवाह फैली या फैलाई गई कि सुरेंद्र यादव बेलागंज से चुनाव नहीं लड़ेंगे. इस अफवाह से परेशान सुरेंद्र यादव को चुनाव से पहले ही लड़ाई शुरू कर देनी पड़ रही है.

सुनीता कांग्रेस में तो कुंदन भागलपुर में

पत्नी ने दल क्या बदला, बाहुबली पति की जेल बदल दी गई. कारण जो भी हो, पर लोजपा को छोड़ कांग्रेस में शामिल हुई समस्तीपुर ज़िला परिषद उपाध्यक्ष सुनीता सिंह का कहना है कि ज़िले में सूपड़ा साफ़ होता देख नीतीश ने उनके पति कुंदन सिंह को भागलपुर जेल भेज दिया है. सुनीता सिंह द्वारा चुनाव लड़ने की तैयारियां शुरू करने के साथ ही रोसड़ा जेल में बंद उनके बाहुबली पति कुंदन सिंह को भागलपुर स्थानांतरित कर दिए जाने से कई अर्थ लगाए जा रहे हैं. चर्चा है कि ज़िले के एक मंत्री के इशारे पर यह कार्रवाई की गई है. मंत्री जी का आकलन था कि अगर कुंदन सिंह इस इलाके में रहे तो सुनीता सिंह को काफ़ी मदद मिल जाएगी. भागलपुर से सुनीता तार जोड़ने में दिक्कत आएगी.

पत्रकारों पर मेहरबान हुए नेता

पत्रकार भाई तो आम दिनों में कुछ नेताओं के चहेते बने रहते हैं, लेकिन चुनावी मौक़ा है, सो लगभग सभी नेताओं ने पत्रकारों के लिए इन दिनों अपना दिल खोल दिया है. उनका जमकर स्वागत-सत्कार हो रहा है, लेकिन इस मामले में राजद-लोजपा ने सभी पार्टियों को पीछे छोड़ दिया है. राजद-लोजपा के तो चुनावी घोषणापत्र में ही पत्रकारों के लिए आवास एवं पेंशन की बात रखी जा रही है. इस तरह के प्रस्ताव से जदयू एवं कांग्रेस दुविधा में हैं. आखिर वे करें तो क्या करें. एक समर्थक ने राय दी कि बड़ी लाइन खींच दीजिए, सब संकट ख़त्म हो जाएगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

दहाई में नहीं पहुंचेंगे लालू: रंजन यादव

चालीस सालों तक लालू प्रसाद के हमसफर रहे जदयू सांसद रंजन प्रसाद यादव जब नीतीश का गुणगान करने लगे तो उनसे नए सवालों की गुंजाइश कम होती चली गई. लगा कि कहीं चालीस सालों तक रंजन नीतीश के साथ तो नहीं थे? लेकिन जब धीरे-धीरे उन्होंने लालू-राबड़ी शासन के ग़लत फ़ैसलों पर से पर्दा उठाना शुरू किया तो साफ़ होता चला गया कि लालू से उनकी चार दशक पुरानी दोस्ती क्यों टूटी और इन दिनों वह नीतीश कुमार पर इतने मेहरबान क्यों हैं. पंद्रह साल के राजद शासन के दौरान अपने कई खट्टे-मीठे अनुभवों को उन्होंने चौथी दुनिया के साथ बांटा. प्रस्तुत हैं उनके साथ सरोज सिंह की बातचीत के खास अंश:

लालू प्रसाद को इतनी ऊंचाई तक पहुंचाने के बाद आप उनसे इतने नाराज क्यों हो गए?

सवाल मेरी नाराजगी का नहीं है, सवाल बिहार की बेहतरी का है. बिहार के लोगों ने बड़ी उम्मीद के साथ एक ग़रीब के बेटे को सत्ता सौंपी थी. लोगों को उम्मीद थी कि हर मायने में पिछड़े बिहार को लालू प्रसाद विकास के रास्ते पर ले जाएंगे. हर जगह अमन-चैन होगा और यहां के बच्चे पढ़-लिखकर दुनिया में नाम कमाएंगे. लेकिन क्या हुआ, सब जानते हैं. लालू प्रसाद बिहार के पिछड़ेपन का इतिहास तो नहीं बदल सके. हां, यह ज़रूर हुआ कि सत्ता के मोह में उन्होंने यहां का भूगोल बदल दिया. जो लालू प्रसाद कहते थे कि बिहार मेरी लाश पर बंटेगा, उन्होंने ही इसे बांटकर, इस ग़रीब राज्य को रसातल में पहुंचा दिया. लालू प्रसाद को यहां की जनता को बताना चाहिए कि ऐसी कौन सी मजबूरी थी, जिस कारण उन्होंने इस राज्य को बंटने दिया. लालू प्रसाद के इस फ़ैसले से राज्य को राजस्व का भारी नुक़सान तो हुआ ही, बिजली, शिक्षा एवं कल-कारखानों के मामले में भी हम पचास साल पीछे चले गए.

जब यह सारा कुछ हो रहा था तो आप भी लालू के साथ थे. आपने उन्हें रोका क्यों नहीं?

सही बात है, मैं उस समय लालू प्रसाद के साथ था और आपके माध्यम से बिहार की जनता को बताना चाहता हूं कि मैंने लालू प्रसाद के हर उस फ़ैसले का विरोध किया, जो बिहार के हित में नहीं था. मैंने उनके किसी भी ग़लत काम में साथ नहीं दिया. सभी जानते हैं कि लालू चारा घोटाले में फंसे, जेल गए, पर किसी ने मुझ पर उंगली नहीं उठाई. क्या सीबीआई ने कभी मुझसे पूछताछ की. मैं तो राबड़ी देवी को मुख्यमंत्री बनाने के पक्ष में भी नहीं था. मैं जानता था कि इससे बिहार को पीछे जाने से कोई नहीं रोक सकता. लालू प्रसाद से मेरा मतभेद इन्हीं सवालों पर था. मैंने हमेशा उनसे जनादेश का सम्मान करने की बात कही, पर वह नहीं माने और सत्ता से बाहर हो गए.

आपको लगता है कि इन्हीं गलतियों की वजह से लालू प्रसाद केवल यादवों के नेता बनकर रह गए?

नेता तो वह होता है, जो समाज को बचाता है, पर लालू प्रसाद ने यादवों का जितना नुक़सान किया, उतना शायद ही किसी ने किया होगा. यादवों को समाज में बिल्कुल अलग कर दिया. उनके राज में कितनी मां-बहनें विधवा हुईं, इसे कोई भूल सकता है क्या? इस समाज के लोग पढ़ाई से दूर होते चले गए. अपनी ताक़त बढ़ाने के लिए रैलियां करते रहे और नारा देते रहे-तेल पिलावन, लाठी घुमावन और राज चलावन. जबकि मैं कहता था-पेन चलावन, इंक पिलावन और ज्ञान बढ़ावन. मुझमें और लालू में यही फर्क है. अब यादव समाज भी जान गया है कि उसका असली नेता कौन है.

लालू प्रसाद एक बार फिर मुख्यमंत्री बनने के लिए जनादेश मांग रहे हैं. कह रहे हैं कि मैं बदल गया हूं.

सपना देखने में कोई हर्ज नहीं है और इसमें पैसा भी नहीं लगता है. आज क्या कोई सोच सकता है कि बिहार की जनता लालू प्रसाद को दोबारा मुख्यमंत्री की कुर्सी पर देखना चाहेगी. यहां की मां-बहनें, जिनका घर से निकलना मुश्किल हो गया था, वे लालू प्रसाद को वोट देंगी? वे युवक, जिन्हें लालू प्रसाद के ग़लत फ़ैसलों के कारण नौकरी नहीं मिल पाई, लालू प्रसाद को वोट देंगे? धंधा-रोज़गार वाले जिनका पूरा दिन दहशत में गुजरता था, वे राजद को वोट देंगे? मैं आपको बता दूं कि बिहार की जनता पूरी तरह सतर्क है और वह लालू प्रसाद के बहलावे में आने वाली नहीं है. लालू लाख जोर लगा लें इस चुनाव में, उनका दहाई पार करना भी मुश्किल है.

आप लालू की तमाम खामियां गिना रहे हैं, लेकिन यह तो बताइए कि जनता नीतीश कुमार को वोट क्यों दे?

नीतीश कुमार ने जनादेश का सम्मान किया है. लालू-राबड़ी के शासन से त्रस्त जनता ने नीतीश कुमार के कंधे पर बिहार को फिर से बनाने का जिम्मा सौंपा था, जिसमें वह पूरी तरह खरे उतरे हैं. गांवों से लेकर राज्य मुख्यालय तक सड़कों का जाल बिछा दिया है. बिहार की जनता के दिलों से भय का माहौल भागा है. अब मां-बहनें बिना खौफ के निकल रही हैं. रोज़गार के अवसर बढ़े तो पलायन भी रुका है. गांव की लड़कियां अब साइकिल से स्कूल जा रही हैं. यह छोटा बदलाव थोड़े ही है. नीतीश कुमार ने जर्जर बिहार को विकास की पटरी पर लाकर खड़ा कर दिया. इस कारण बिहार की जनता नीतीश कुमार को दोबारा मुख्यमंत्री बनाने के लिए बेताब है.

नीतीश राज में भी लोग बिजली के लिए तरसते रहे और राज्य में कोई बड़ा उद्योग नहीं लग सका.

मैंने आपसे पहले भी कहा कि केवल सत्ता बचाने के लिए लालू प्रसाद ने इस राज्य का भूगोल बदल दिया. बिजली उत्पादन की बड़ी इकाइयां झारखंड में चली गईं और बिहार के खाते में बस जर्जर कांटी एवं बरौनी थर्मल बच गईं. इसके अलावा केंद्र को बिजली के मामले में जितना सहयोग करना चाहिए, उतना नहीं हो रहा है. अब तो केंद्र कोल लिंकेज की जगह कोल ब्लाक की बात कर रहा है. चीनी मिल के बारे में केंद्र सरकार की नीतियों के कारण कल-कारखाने का रास्ता बंद पड़ा है, लेकिन हमें पूरा भरोसा है कि नीतीश कुमार के नेतृत्व में बिहार इन संकटों पर काबू पा लेगा और विकास का नया इतिहास लिखेगा.

feedback@chauthiduniya.com

फोटो-प्रभात पाण्डेय

सासाराम

राजनीतिक विरासत के लिए छिड़ी जंग

मीरा कुमार मेधावी कीर्ति

देश के पूर्व उप प्रधानमंत्री बाबू जगजीवन राम के निधन के बाद संपत्ति विवाद को लेकर उनके परिवार में उठा तूफ़ान भले ही शांत हो गया हो, लेकिन उनकी राजनीतिक विरासत हथियाने की कवायद अभी थमी नहीं है. लोकसभा अध्यक्ष पद पर काबिज मीरा कुमार को अपने पैतृक संसदीय क्षेत्र सासाराम में आने वाले दिनों में नई चुनौती का सामना करना पड़ सकता है. विधानसभा चुनाव का बिगुल बजने के बाद बाबू जगजीवन राम के पुत्र स्वर्गीय सुरेश राम की पुत्री मेधावी कीर्ति ने रोहतास की धरती पर क़दम रखकर इस चुनौती का एक तरह से खामोश आगाज कर दिया है. यही नहीं, उन्होंने अपनी पार्टी कांग्रेस (जे) की तरफ से ज़िले की सभी सात सीटों पर चुनाव लड़ने की घोषणा की है. इसके साथ ही सासाराम संसदीय क्षेत्र के सभी विधानसभा क्षेत्रों में उम्मीदवार देने की कवायद भी मेधावी कीर्ति ने तेज़ कर दी है.

सासाराम संसदीय क्षेत्र के सभी विधानसभा क्षेत्रों में उम्मीदवार देने की कवायद भी मेधावी कीर्ति ने तेज़ कर दी है. सासाराम सहित कई जगहों पर लगातार जनसभाएं आयोजित करके जिस तरह इस युवा महिला नेत्री ने आक्रामक अंदाज अख्तियार किया है, उससे तो यही लगता है कि जगजीवन राम की पोती अपनी पैतृक संपत्ति को लेकर छिड़ी जंग में भले ही खामोश हो गई, लेकिन राजनीतिक विरासत पाने के लिए अंदर ही अंदर छटपटा रही है.

सासाराम सहित कई जगहों पर लगातार जनसभाएं आयोजित करके जिस तरह इस युवा महिला नेत्री ने आक्रामक अंदाज अख्तियार किया है, उससे तो यही लगता है कि जगजीवन राम की पोती अपनी पैतृक संपत्ति को लेकर छिड़ी जंग में भले ही खामोश हो गई, लेकिन राजनीतिक विरासत पाने के लिए अंदर ही अंदर छटपटा रही है. बताते चलें कि हरियाणा सरकार में मंत्री पद पाने के बाद भी गत कई चुनावों में मेधावी कीर्ति ने सासाराम आकर मीरा कुमार का विरोध किया था, लेकिन वह कारगर साबित नहीं हुआ. अब धीरे-धीरे अपनी जड़ें गहराई तक पहुंचाने के लिए मेधावी ने क्षेत्र के पुराने राजनीतिक मठाधीशों तक अपनी पैठ बनाने के प्रयास तेज़ कर दिए हैं. इस जंग की धमक लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार की चौखट तक भी जा पहुंची है.

हालांकि उस खेमे से मेधावी कीर्ति की इस मजबूत शुरुआत पर कोई प्रतिक्रिया नहीं आई है, लेकिन राजनीतिक विशेषज्ञों का मानना है कि देर-सबेर बाबू जगजीवन राम की राजनीतिक विरासत पर क़ब्ज़ा जमाने के लिए उनकी पुत्री और पोती के बीच होने वाली जंग काफी रोचक होगी. मेधावी कीर्ति ने अभी तक प्रदेश स्तर पर भले ही कोई कार्यक्रम का आयोजन नहीं किया, लेकिन कवायद इस बात की है कि विधानसभा चुनाव में एक प्रभावशाली पैठ दिखाकर बिहार की राजनीति में दमदार क़दम रखा जाए, ताकि राजनीतिक आकाओं के कंधे पर सवारी कर विरासत हथियाने में सफलता मिल सके. भाषणों में मेधावी कीर्ति ने राजनीतिक विरासत को लेकर कोई ज़्यादा आक्रामकता नहीं दिखाई है, लेकिन इशारों ही इशारों में कह डाला कि पितृ प्रधान इस समाज में बेटे का हक़ मार देना कहां तक जायज है. उन्होंने अपने स्वर्गीय पिता सुरेश राम के विधानसभा क्षेत्र मोहनिया में दमदार लड़ाई की घोषणा भी की है.

ममता चौहान
feedback@chauthiduniya.com

ऐसे बनी मुंडा सरकार!

नवल किशोर सिंह

आनन-फानन में झारखंड में अर्जुन मुंडा की सरकार बनी. उन्होंने तीसरी बार मुख्यमंत्री का पदभार ग्रहण किया. इस पर मुंडा के प्रबल विरोधी रघुवर दास और यशवंत सिन्हा का खेमा तटस्थ रहा. भाजपा के केंद्रीय नेताओं के बीच सहमति न बन पाने के बावजूद नितिन गडकरी ने सरकार गठन को हरी झंडी दे दी. सूत्रों का कहना है कि नागपुर के तीन करीबी उद्यमियों अजय संचेती, तुलसी अग्रवाल, नरेश ग्रोवर और दिल्ली के एक साहूकार सेठिया ने अर्जुन मुंडा की ताजपोशी में अहम भूमिका अदा की. पिछली शिबू सरकार के दौरान भी गडकरी उनके लिए सिफ़ारिशें किया करते थे और लाभ पहुंचाते रहते थे. राष्ट्रपति शासन में उनकी दाल नहीं गल पा रही थी, इसलिए उन्होंने गडकरी के जरिए सरकार गठन कराने की पहल की. इसके लिए पानी की तरह पैसा बहाया गया. उनकी नज़र झारखंड की अकूत खनिज संपदा पर है. उन्हें लाभ पहुंचाने के लिए ही गडकरी ने आडवाणी और सुषमा स्वराज सरीखे बड़े नेताओं की सहमति लेने की भी ज़रूरत नहीं समझी. बताया जाता है कि झामुमो के असंतुष्ट नेताओं चंपई सोरेन, सीता सोरेन, टेकलाल महतो और साइमन मरांडी को गडकरी से मिलवा कर उनकी नाराज़गी दूर करने में नरेश ग्रोवर ने अहम भूमिका निभाई. वहीं दिल्ली के साहूकार सेठिया ने मुंडा की ताजपोशी की तैयारी से पूर्व दिल्ली लाए गए झामुमो के विधायकों की हवाई यात्रा से लेकर पांच सितारा होटलों में ठहराने तक का खर्च उठाया. ख़बर यह भी है कि अजय संचेती ने रघुवर दास को फोन कर विधायक दल के नेता पद से इस्तीफ़ा देने को कहा था. इस पर रघुवर दास गरम हो गए. उसके तुरंत बाद गडकरी का फोन आया तो दास ने तत्काल इस्तीफ़ा दे दिया. उक्त व्यवसायी चाहते हैं कि खान एवं विद्युत आदि तमाम मलाईदार विभाग मुंडा अपने पास रखें, ताकि उन्हें लूट के खेल की सुविधा मिले. मुंडा सरकार उक्त व्यवसायियों के इशारे पर ही काम करेगी, इसका संकेत इस बात से भी मिलता है कि शपथ ग्रहण के तुरंत बाद मुंडा विशेष विमान से नागपुर रवाना हो गए. बहाना नितिन गडकरी से मिलने का था, लेकिन सूत्रों का कहना है कि असली मक़सद तीनों उद्यमियों के साथ आगे की रणनीति पर विचार विमर्श करना था. दावा यहां तक है कि मुंडा सरकार नागपुर के रिमोट से नियंत्रित होगी. उधर विपक्षी दलों ने भी सरकार बनाने में बड़ी डील होने का आरोप लगाया है. केंद्रीय मंत्री सुबोधकांत सहाय और झाविमो प्रमुख बाबूलाल मरांडी ने सीधे तौर पर इसे भाजपा के केंद्रीय नेताओं की लूटो और पहुंचाओ की नीति के तहत संपन्न हुई घटना बताया है. साथ ही इसका भंडाफोड़ करने का संकल्प लिया है. राजनीतिक हलकों में यह सवाल तैरता रहा कि आख़िर एनडीए खेमे में एक सप्ताह के अंदर सरकार बनाने पर सहमति कैसे और किन हालात में बन गई. विधायकों में सुविधाएं छिनने की बेचैनी ज़रूर थी, लेकिन राष्ट्रपति शासन के साढ़े तीन माह के दौरान झामुमो को छोड़कर सरकार बनाने की कोई बात भी नहीं कर रहा था. हेमंत सोरेन कभी कांग्रेस तो कभी भाजपा नेतृत्व के पास सरकार बनाने के लिए आगे आने की गुहार लगा रहे थे, लेकिन उनकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दे रहा था. सरकार बनाने में भाजपा के अंदर की गुटबंदी भी आड़े आ रही थी. आदिवासी बनाम ग़ैर आदिवासी मुख्यमंत्री का मुद्दा भी रुकावट बन रहा था. झामुमो के पल-पल बदलते बयानों और ढुलमुल रवैये के कारण भी उसकी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह लग रहा था. फिर अचानक फ़िज़ां में यह बदलाव कैसे आया, इस सवाल ने राजनीति के दिग्गजों को भी चक्कर में डाल दिया है. भाजपा के भी कुछ बड़े नेता सरकार गठन के पीछे कुछ स्वार्थी तत्वों की भूमिका दबी ज़ुबान से स्वीकार कर रहे हैं.

बहरहाल सरकार बन चुकी है. नई बोतल में पुरानी शराब का नशा अब चढ़ने लगा है. सरकार गठन के पीछे कुछ बड़े औद्योगिक घरानों के व्यवसायिक हित और घपलों-घोटालों में फंसे पूर्व मंत्रियों, विधायकों एवं नौकरशाहों की छटपटाहट और सुविधाओं से वंचित विधायकों की बेचैनी उजागर हो रही है. राष्ट्रपति शासन में भ्रष्टाचार के विरुद्ध अभियान तेज़ होता जा रहा था. एक-एक कर सारे मामलों की जांच का ज़िम्मा सीबीआई के हवाले किया जा रहा था. नेताओं और अफसरों पर निगरानी का शिकंजा कसता जा रहा था. नक्सल विरोधी अभियान में भी तेज़ी आ गई थी. नक्सली सुरक्षात्मक स्थिति में आ चुके थे. बड़े नक्सली नेता आत्मसमर्पण करते जा रहे थे. उनके संगठन में भगदड़ मच गई थी. उनका जनाधार खिसकता जा रहा था. जनता का सरकारी तंत्र पर भरोसा बनने लगा था. आम जनता भी राष्ट्रपति शासन में हो रहे कार्यों से संतुष्ट नज़र आने लगी थी. राजनीति की मौजूदा संस्कृति के लिए यह ख़तरे की घंटी थी. यह जितनी देर बजती, उनकी पोल उतनी ही तेज़ी से खुलती. इसलिए एक सरकार का बन जाना ज़रूरी हो गया था. सरकार बनने की दो ही सूरतें थीं. पहली यह कि विधानसभा भंग कर नया जनादेश लिया जाए और दूसरी यह कि जोड़-तोड़कर एक कामचलाऊ सरकार बना ली जाए. झाविमो प्रमुख बाबूलाल मरांडी पहले रास्ते के पक्ष में थे. वह बार-बार विधानसभा भंग कर नया चुनाव कराने की मांग कर रहे थे, लेकिन कांग्रेस उनकी बातों को अनसुनी करती रही. दरअसल कांग्रेस राष्ट्रपति शासन जारी रखने के पक्ष में थी, क्योंकि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्धियों का श्रेय उसी के खाते में जा रहा था. उसे इस बात की भनक भी नहीं थी कि अपने अंतर्विरोधों को सुलझा कर एनडीए खेमा सरकार बनाने की पहल करेगा और उसमें कामयाब भी हो जाएगा. झामुमो पर भाजपा दोबारा भरोसा कर लेगी, उसे इसकी उम्मीद नहीं थी.

फिलहाल मुंडा सरकार को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा. उस पर नक्सल विरोधी अभियान जारी रखने का दबाव रहेगा और झामुमो इसमें अड़ंगा डालने में कोई कसर नहीं छोड़ेगा. सूखे और अकाल की समस्या से निपटने के लिए केंद्र से मिलने वाली सहायता को ज़रूरतमंदों तक पहुंचाने का काम टेढ़ी खीर साबित होगा.

feedback@chauthiduniya.com

फिर बहेंगी ख़ून की नदियां

गंगा की कोख से निकली सात सौ पचास एकड़ ज़मीन को लेकर नरसंहार की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी है. ऐसा भागलपुर के तत्कालीन समाहर्ता की ग़लत नीति के कारण हुआ है. समय रहते अगर ज़िला प्रशासन सजग नहीं हुआ और ज़मीन विवाद को सुलझाया नहीं गया तो एक बार फिर दियारा में बहेंगी ख़ून की नदियां.

राजेश सिन्हा

नदियों की कोख से निकली ज़मीन पर मालिकाना हक़ जताने के लिए वैसे तो कोसी और फरकिया की धरती पर वर्षों से ख़ून की होली खेली जाती रही है, लेकिन इस बार जिस अंदाज़ में नरसंहार की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी है, उससे ऐसी आशंका है कि बिहार के खगड़िया ज़िले में बीते वर्ष घटित अमौसी नरसंहार की घटना कहीं छोटी न पड़ जाए. हालांकि इस नरसंहार की बुनियाद भागलपुर के तत्कालीन समाहर्ता द्वारा ही तैयार की गई है. दरअसल गंगा के गर्भ में समाई सात सौ पचास एकड़ ज़मीन का भागलपुर के तत्कालीन समाहर्ता द्वारा न केवल ग़लत तरीक़े से सर्वे कर दिया गया, बल्कि दो अलग-अलग पक्षों के किसानों के नाम रसीद भी काट दी गई. नतीजतन पहले से ज़मीन पर क़ब्ज़ा जमाए किसानों का कहना है कि ज़मीन अगर गई तो नक्सली बनेंगे. जान दे सकते हैं और ले भी सकते हैं, लेकिन ज़मीन नहीं छोड़ेंगे. तीन ओर से गंगा नदी से घिरे परबत्ता प्रखंड अंतर्गत कुल्हड़िया, भरसों एवं लगार पंचायत के सैकड़ों किसान अपनी किस्मत पर न केवल आंसू बहाने को विवश हैं, बल्कि सीने में जल रही आग के कारण तप भी रहे हैं. चिंता का मुख्य कारण है तीनों पंचायत की सीमा से सटे भागलपुर के थाना बिहपुर स्थित मौजा शंकरपुर की सात सौ पचास एकड़ ज़मीन को लेकर उत्पन्न हुआ अंदरूनी तनाव. यह तनाव इस क़दर बढ़ता जा रहा है कि कभी भी विकराल रूप धारण कर सकता है. 1906 में जब पूरे बिहार में ज़मीन का सर्वे किया जा रहा था, तब भौगोलिक बनावट और गंगा नदी में डूबे रहने के कारण इस मौजे की ज़मीन का सर्वे नहीं हो पाया. 1909 की क़बूलियत के आधार पर किसान इस ज़मीन पर जोत आबाद करने लगे. जमींदारी उन्मूलन के बाद भागलपुर के तत्कालीन समाहर्ता ने 1959-1960 में अपने स्तर से ज़मीन का सर्वे कराया. 1964 में प्रकाशित सर्वे में कई प्रकार की गड़बड़ियां इसलिए सामने आईं, क्योंकि ज़मीनी स्तर पर सर्वे कराने के बजाय समाहर्ता की मेज पर ही ज़मीन का सर्वे करा लिया गया. परबत्ता प्रखंड अंतर्गत सलारपुर के किसान महेंद्र यादव का कहना है कि उक्त मौजे की ज़मीन वर्ष 1951 से 1971 तक गंगा में डूबी हुई थी. इसलिए 1960 में ज़मीन के सर्वे को वैधानिक नहीं माना जा सकता. पहले का नक्शा भी किसानों की दलील को पुख्ता करता है. 1964 में प्रकाशित सर्वे को लेकर बिशौनी निवासी एवं आलमनगर विधानसभा क्षेत्र के पहले विधायक यदुनंदन झा ने विधानसभा में मामला उठाया. सर्वे की रिपोर्ट को निरस्त करने की मांग को गंभीरता से लेते हुए बिहार सरकार के राजस्व विभाग ने 24 नवंबर, 1965 को अधिसूचना (संख्या एम/एस 102/65/127) जारी कर डीएम द्वारा कराए गए सर्वे को संक्षिप्त सामंजन क्रिया बताते हुए न केवल शीघ्र व्यापक सर्वे कराने की आवश्यकता पर बल दिया, बल्कि शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक दिशानिर्देश भी अधिकारियों को दिए. इस अधिसूचना की प्रति बिहपुर के अंचल अधिकारी एवं नवगछिया के एसपी को भी दी गई थी. 20 जनवरी, 1966 को भागलपुर के अपर समाहर्ता ने रिवीजन वाद 14/1964-65,15/1964-65 एवं 16/1964-65 की सुनवाई करते हुए कहा कि पूर्व में ही राज्य सरकार द्वारा इस मौजे की ज़मीन का सर्वे निरस्त किया जा चुका है, इसलिए सुनवाई बंद की जाती है. 3 अगस्त, 1979 को बिहार सरकार के राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग के उपसचिव सच्चिदानंद प्रसाद ने सभी आयुक्तों एवं समाहर्ताओं के नाम प्रेषित पत्र (संख्या-17 सर्वे 02-149/79-3956 रा0) में स्पष्ट कहा कि गंगा बरार होने के बाद यदि ज़मीन की पहचान समाप्त नहीं होती है तो बिहार काश्तकार अधिनियम की धारा 52 ए के अनुसार ऐसी ज़मीन पुराने रैयतों की ही मानी जाएगी. उपरोक्त तथ्यों के आलोक में 150 किसान ज़मीन की लगान रसीद कटाने लगे, लेकिन वर्ष 2008 में बिहपुर के अंचल अधिकारी ने यह कहकर उनके नाम रसीद काटने से मना कर दिया कि 1960 में हुए सर्वे के आधार पर आलमनगर के पूर्व विधायक यदुनंदन झा के पुत्र उमेश चंद्र झा सहित ग्यारह भूधारियों के नाम दाख़िल-ख़ारिज़ कर लगान रसीद निर्गत कर दी गई है.

इस तरह वर्षों से लगान रसीद कटाकर खेती करने वाले 150 किसान और 1960 के सर्वे के आधार दाख़िल-ख़ारिज़ की रसीद कटाकर ग्यारह बड़े भूधारी आमने-सामने आ गए हैं. इस 750 एकड़ भूमि पर दखल को लेकर कई बार छिटपुट रूप से हिंसा भी हो चुकी है. इस संदर्भ में बिहपुर थाने में संख्या 150/08 एवं 450/08 सहित कई अन्य मामले भी दर्ज हो चुके हैं. 150 किसानों में से एक अरुण कुमार सिंह द्वारा मुख्यमंत्री को दिए गए आवेदन के आधार पर मामले की जांच कर भागलपुर के बंदोबस्त पदाधिकारी ने राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग को प्रेषित प्रतिवेदन (पत्रांक 96-1 दिनांक 7 अप्रैल, 2008) में कहा कि विभाग द्वारा पुनरीक्षण सर्वे न किए जाने से दियारा क्षेत्र में विधि व्यवस्था बिगड़ने की समस्या बन रही है. बार-बार स्थिति बिगड़ते देख अरुण कुमार सिंह, सूर्य नारायण यादव, अशोक यादव, राधा यादव एवं हनुमान पासवान ने पटना उच्च न्यायालय में सीडब्लूजेसी (5620/2008) दायर कर भागलपुर के तत्कालीन समाहर्ता द्वारा 1960 में किए गए मिनी सर्वे को चुनौती दी. अदालत द्वारा 1960 में किए गए मिनी सर्वे को अवैध करार देते हुए याचिकाकर्ता को पूर्ण सर्वे के लिए उचित स्तर पर आवेदन देने को कहा गया. भागलपुर के समाहर्ता ने राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग के सचिव को प्रेषित अपने पत्र (पत्रांक 184 रा. दिनांक 26 अक्टूबर, 2009) में कहा कि वर्तमान में उक्त मौजे की ज़मीन पर जमींदारी उन्मूलन के बाद तैयार की गई जमाबंदी से रसीद काटना बंद कर दिया गया है और 1964 में प्रकाशित सर्वे की रिपोर्ट के आधार पर तैयार खतियान के मुताबिक मालगुजारी रसीद काटी जा रही है. नतीजतन भूमि विवाद होने की आशंका बन रही है. अत: भागलपुर के गंगा दियारा क्षेत्र के पूर्ण सर्वेक्षण के लिए कार्रवाई करने के आदेश दिए जाएं.

इस बीच भागलपुर के अपर समाहर्ता ने 150 किसानों के पक्ष में आदेश देते हुए यथास्थिति बनाए रखने को कह दिया. भागलपुर के समाहर्ता द्वारा नए सर्वे की मांग पर भू अभिलेख विभाग के निदेशक ने कहा कि केंद्र सरकार द्वारा आधुनिक तकनीक से सर्वे कराने की प्रक्रिया जारी है. सर्वे करने के लिए दक्ष एजेंसी का चयन किया जा रहा है, इसलिए तब तक रिवीजनल सर्वे के अभिलेखों से काम चलाया जाए. जबकि किसानों का कहना है कि इस इलाक़े में रिवीजनल सर्वे हुआ ही नहीं है. बहरहाल, इलाक़े की 750 एकड़ ज़मीन के अलग-अलग दावेदार एक-दूसरे से गुत्थमगुत्था का ताना-बाना बुनने में लगे हैं. एक पक्ष के किसान 1954 से 2008 तक की लगान रसीदें लेकर दूसरे पक्ष से भिड़ने को तैयार हैं तो दूसरे पक्ष के नाम पर 1975 से लगान रसीद काटकर पदाधिकारियों ने नरसंहार की पृष्ठभूमि तैयार कर दी है. दूसरे पक्ष के अहम पक्षकार पूर्व विधायक यदुनंदन झा के पुत्र उमेश चंद्र झा उर्फ़ लाली का कहना है कि उक्त ज़मीन पर 1970 तक उनका क़ब्ज़ा रहा. 1992 में सरकार द्वारा उन्हें तंग और तबाह किया जाने लगा. वर्ष 2000 में 1960 के सर्वे के आधार पर उनके द्वारा मोटेशन कराया गया था. अब भी आधी ज़मीन पर उनका क़ब्ज़ा है. दूसरे पक्ष का कहना है कि यदि उन्हें ज़मीन से बेदखल करने की कोशिश की गई तो नरसंहार होना तय है. उधर खगड़िया के ज़िलाधिकारी अभय कुमार सिंह का कहना है कि विवाद को सुलझाने के लिए प्रशासन सजग है. सभी ज़मीनी विवादों को सुलझाने का आदेश दे दिया गया है. उन्होंने यह भी कहा कि इस विवाद को सुलझाना भागलपुर ज़िला प्रशासन का कर्तव्य है.

feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

राजकुमार पांडे की फिल्म लहरिया लूटा ए राजा जी में भोजपुरी फिल्मों की कैटरीना पाखी हेगड़े कुछ ऐसे ही किरदार में दिखाई देंगी, जो बसंती के किरदार से काफी मेल खाता है.

बुद्ध की नगरी

सरकारी भूमि की लूट

बुद्ध की नगरी में सरकारी भूमि की सरेआम लूट हो रही है. भू-माफिया फर्जी कागजात बनाकर सरकारी जमीन बेच रहे हैं और प्रशासन उन्हें रोकने के बजाय मूकदर्शक बना हुआ है. इस लूट में सरकारी कर्मचारी, जनप्रतिनिधि, दबंग और प्रमुख व्यवसायी आदि सभी शामिल हैं. यही वजह है कि कोई कार्रवाई अंजाम तक नहीं पहुंच पाती है.

सुनील सौरभ

दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के लोग जीवन में कम से कम एक बार बोधगया की यात्रा ज़रूर करना चाहते हैं. बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए बोधगया मक्का है. जबसे बोधगया का महाबोधि मंदिर वर्ल्ड हेरिटेज में शामिल हुआ है, तबसे बोधगया बौद्ध धर्मावलंबियों के लिए आकर्षण का केंद्र बन गया है. इसलिए यहां आने वालों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है. यही कारण है कि हर कोई बोधगया में अपना आशियाना बनाना चाहता है. यहां पदस्थापित सरकारी कर्मचारियों, जनप्रतिनिधियों, दबंगों और प्रमुख व्यवसायियों ने बोधगया मठ की भूमि, परवाना, गैर मजरुआ भूमि के साथ-साथ श्मशान घाट की भूमि के फ़र्ज़ी काग़जात बनवा कर उनका निबंधन करा लिया है. इनमें से अधिकांश ज़मीनों पर विदेशी बौद्ध मठों की स्थापना की गई है. इतना ही नहीं, ऐसी ही भूमि पर अतिक्रमण करके होटल, मार्केट कांप्लेक्स और अन्य भवन भी बना लिए गए हैं.

बुद्ध की नगरी में सरकारी भूमि की जमकर लूट हुई और इस बहती गंगा में लगभग सभी ने हाथ साफ़ किया. ग़ौरतलब है कि बोधगया में ज़मीन की क़ीमत प्रति एकड़ एक करोड़ रुपये है. विदेशी धार्मिक संस्थाएं यहां की ज़मीन के लिए मुंहमांगी क़ीमत देती हैं. यही वजह है कि बोधगया में सक्रिय भू-माफियाओं ने फर्जी कागजात बनवा कर परचा, परवाना, गैर मजरुआ एवं श्मशान घाट की ज़मीनों को बेच डाला. यह भी बताया जा रहा है कि यदि शासन-प्रशासन बोधगया में परचा, परवाना समेत अन्य सरकारी भूमि पर ईमानदारी से दखल-क़ब्ज़ा करना शुरू कर दे, तो यहां आधे से अधिक होटल, विदेशी बौद्ध मठ अतिक्रमण के दायरे में आ जाएंगे. अगर इस मामले में शासन-प्रशासन सख्त होता है तो बोधगया में सक्रिय भू-माफिया विदेशी बौद्ध मठों के संचालकों की ओर से भारत सरकार के गृह मंत्रालय एवं अपने-अपने दूतावासों को यह लिखवा देते हैं कि यहां के सरकारी पदाधिकारी अतिक्रमण के नाम पर हम सभी को तंग कर रहे हैं, क्यों न यहां से बौद्ध मठ हटा लिया जाए. इसके बाद भू-माफिया बोधगया में यह अफवाह फैलाते हैं कि सरकारी पदाधिकारियों के रवैये से विदेशी पर्यटक बोधगया आना नहीं चाहते हैं. इससे विदेशों में भारत की छवि ख़राब होती है. इतना ही नहीं, बिहार सरकार को विदेशी मुद्रा के साथ-साथ सरकारी राजस्व की भी क्षति होती है. यही वजह है कि प्रशासन बौद्ध मठों, होटलों और अन्य अवैध भवनों के ख़िलाफ़ कार्रवाई नहीं करता. अगर कार्रवाई करता भी है तो उसे बीच में ही बंद करना पड़ता है. इस स्थिति में बोधगया के सभी होटल एवं बौद्ध मठों के संचालक एकजुट हो जाते हैं, लेकिन हक़ीक़त यह है कि सरकारी भूमि, भूमिहीनों के बीच वितरित की गई भूमि और श्मशान घाट की भूमि के फ़र्ज़ी काग़जात बना लिए गए हैं, जिनकी सही जांच सीबीआई ही कर सकती है. इतना ही नहीं, फ़र्ज़ी काग़जात के सहारे निबंधन भी करा लिए गए हैं. इसकी फेहरिस्त काफी लंबी है. बोधगया के मस्तीपुर मौजा में भूमि अर्जन वाद संख्या 16/55-56 द्वारा 72 एकड़ भूमि अर्जित की गई थी. इस भूमि के प्लॉट संख्या 352, 353, 358, 359, 361 को थाईलैंड बौद्ध मठ एवं प्लॉट संख्या 287, 288, 283 को जापानी बौद्ध मठ को लीज पर दिया गया था. शर्तों के मुताबिक़, लीज पर दी गई भूमि का स्वामित्व सरकार का और क़ब्ज़ा लीज धारक का होता है, लेकिन सरकारी कर्मचारियों की मेहरबानी से 1981 में हुए सर्वे में उक्त दोनों मठों के नाम से ही खाता खोल दिया गया. सड़क के लिए अर्जित भूमि (प्लॉट संख्या 1966) पर होटल एंबेसी का अधिकांश भाग निर्मित है. इसी प्रकार खाता संख्या 285 प्लॉट संख्या 2008 रकबा 85 डिसमिल गैर मजरुआ भूमि का फ़र्ज़ी दस्तावेज तैयार कराकर इस जगह पर आम्रपाली गेस्ट हाउस बना लिया गया है. दोराहे पर स्थित होटल डेल्टा के संचालक भी 44 डिसमिल सरकारी भूमि पर क़ब्ज़ा जमाए बैठे हैं. यही स्थिति खाता संख्या 1034 प्लॉट संख्या 3113 पर निर्मित तथागत होटल का है. वहीं प्रिंस होटल के मालिक गोपाल प्रसाद का मकान भी (प्लांट संख्या 2279) गैर मजरुआ ज़मीन पर बना है.

यदि शासन-प्रशासन बोधगया में परचा, परवाना समेत अन्य सरकारी भूमि पर ईमानदारी से दखल-क़ब्ज़ा करना शुरू कर दे, तो यहां आधे से अधिक होटल, विदेशी बौद्ध मठ अतिक्रमण के दायरे में आ जाएंगे.

अमवां में गया होम्योपैथिक कॉलेज भी सरकार द्वारा अधिग्रहीत की गई भूमि पर बना है. इस कॉलेज के सचिव राज्य के पथ निर्माण मंत्री एवं गया शहर के विधायक डॉ. प्रेम कुमार हैं. निरंजना नदी के किनारे हाल में ही थावोर्न इंडिया सोसाइटी की ओर से लगभग तीन एकड़ भूमि पर निरंजना थाई मंदिर का निर्माण किया गया है, जबकि सोसाइटी ने मात्र 20 डिसमिल खतियानी भूमि ही खरीदी थी. बताया जाता है कि अन्य भूमि विवादास्पद है. सर्वे नक्शा में खाता संख्या 449, प्लॉट संख्या 679, 681 श्मशान घाट के रूप में दर्ज है, लेकिन भू-माफियाओं ने इसका भी फर्जी कागजात बना लिया और इस जमीन को विदेशी संस्थाओं के हाथों बेच दी. इस संस्था ने सड़क के लिए अधिग्रहीत ज़मीन को भी अपने क़ब्ज़े में कर लिया. यह देख ग्रामीण गुस्साए हुए हैं. इसका विरोध करने पर गांव के उप मुखिया राजेश कुमार को जेल भी जाना पड़ा. ऐतिहासिक कालचक्र मैदान की भूमि के साथ-साथ बोधगया प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के पास स्थित भूमि का भी ग़लत तरीके से निबंधन करा लिया गया है. इस भूमि पर एक चिकित्सक नर्सिंग होम का संचालन कर रहे हैं. इन सारे मामलों को लेकर जिलाधिकारी संजय कुमार सिंह काफी गंभीर हैं. वह सारे काग़जात मंगाकर जांच कराने में लगे हैं. उन्होंने कहा कि जांच के बाद यदि सरकारी भूमि पर अवैध क़ब्ज़े की बात सामने आती है तो संबंधित लोगों पर कार्रवाई की जाएगी.

feedback@chauthiduniya.com

बसंती बनेंगी पाखी

आपको सुपरहिट फिल्म शोले की बसंती तो याद ही होगी. हमेशा बक-बक करने वाली अल्हड़ बसंती के किरदार ने हेमामालिनी को आज तक लोगों के जेहन में ताजा कर रखा है. अब वही किरदार आपको भोजपुरी फिल्मों में भी दिखाई देने वाला है. राजकुमार पांडे की फिल्म लहरिया लूटा ए राजा जी में भोजपुरी फिल्मों की कैटरीना पाखी हेगड़े कुछ ऐसे ही किरदार में दिखाई देंगी, जो बसंती के किरदार से काफ़ी मेल खाता है. इस फिल्म में पाखी के अपोजिट उनके हिट जोड़ीदार दिनेश लाल निरहुआ न होकर रवि किशन होंगे. फिल्म के बारे में पाखी कहती हैं कि जब उन्हें फिल्म की स्क्रिप्ट सुनाई जा रही थी, तभी से यह किरदार दिमाग़ में घर कर गया था. बचपन से ही मैं इस किरदार को देखती आई हूं. अब आज मुझे इस किरदार को निभाने का मौक़ा मिला है. हालांकि वह कहती हैं कि फिल्म लहरिया लूटा ए राजा जी शोले का रीमेक नहीं है. यहां तो बस एक किरदार ऐसा है, जो बसंती के किरदार की याद दिलाएगा, बाकी पूरी फिल्म की कहानी कुछ और है. ग़ौरतलब है कि इससे पहले एक और फिल्म हमरा मुट्ठी मा दम बा में उनके किरदार को लेकर समानता जताई गई थी. इस फिल्म में उनका किरदार प्रकाश झा की फिल्म राजनीति से प्रेरित बताया गया था. यहां तक कि उनका लुक भी कैटरीना जैसा ही था. अब इसे संयोग कहें या कुछ और कि उनका हर किरदार किसी न किसी बॉलीवुड फिल्म के किरदार से मेल खाने लगता है. अगर बीते साल की बात करें तो उनकी चारों फिल्में सात सहेलियां, शिवा, निरहुआ नंबर वन और दाब सुपरहिट रही हैं. इस रिकॉर्ड को देखते हुए उम्मीद तो यही की जानी चाहिए कि उनकी अगली फिल्में भी बॉक्स ऑफिस पर जबरदस्त धमाका करेंगी. वह बसंती के किरदार में कितना रंग जमा पाती हैं, यह तो फिल्म की रिलीज के बाद ही पता चलेगा, लेकिन इस किरदार से चर्चा तो उन्हें खूब मिल रही है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

Almost all Toppers of Bihar & Jharkhand Medical are from Goal Institute

SUCCESS IS NOW THE TRADITION OF GOAL STUDENTS

Hostel Facility vailable

GOAL IIT-JEE MEDICAL
Nation's Leading Institute

TARGET / FOUNDATION

Entrance Test for Admission in CHALLENGER GROUP 3rd Oct. 2010 (PT), 5th Oct. 2010 (MAIN), 24, 25, 26th Oct. 2010 Interview

Adm. office: 114, Emarat Firdaush, Exhibition Road, Patna-1, Ph.: 2321702

B-58, Goal Building, Budha Colony, Patna-1: Ph.: 9334594165/66/67

3rd floor Shivam Complex, Opp. Gopal Market, Naya Tola, Patna-4 | 9334594166

Branches : Ranchi : 9835052858, 9334424647, Jamshedpur : 9835358883, Dhanbad : 9334098595, Bokaro : 9334232258, Muzafarpur : 9835626972, Bhilai : 9826943595, Purnea : 9835873639, Bhagalpur : 9835873639, Hazaribagh : 9334594166, Delhi : 9310754557, Kota : 9334594165, Varanasi : 9334594167, Gaya : 9334424647, Kolkata : 9903071447, 9835873639